हज़रत मुहम्मद (सल्ल०)

सबके लिए

लेखक
मुहम्मद रफ़ीउद्दीन फ़ारूक़ी
अनुवादक
मुहम्मद आबिद हामिदी
सम्पादक
एस० कौसर लईक़

विषय-सूची

'बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम'

(अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।)

भूमिका

मनुष्य को आदर्श जीवन बिताने के लिए मार्गदर्शन केवल दो ही साधनों से मिला है– एक अल्लाह की अवतरित किताबों से और दूसरे ईश-दूतों के जीवन-चरित्र से। ये दोनों चीज़ें आपस में इस प्रकार जुड़ी हुई हैं कि एक को दूसरे से अलग करके ईश्वरीय इच्छा को समझा ही नहीं जा सकता। जिन लोगों ने भी यह हरकत की वे पथ-भ्रष्ट होकर रह गए और अपने विभिन्न धर्म बना लिए। जबकि अल्लाह ने हमेशा एक ही दीन भेजा था।

क़ुरआन मजीद और हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* इसी सत्य-मार्ग और ईश्वरीय मार्गदर्शन की अन्तिम कड़ी हैं, जो रहती दुनिया तक मानवजाति के लिए मार्ग-ज्योति हैं। ईश्वरीय मार्गदर्शन पर किसी का एकाधिकार नहीं होता। मुसलमान तो वास्तव में इस मार्गदर्शन के अमीन (अमानतदार) बनाए गए हैं।

इसी एहसास के साथ जमाअत-ए-इस्लामी हिन्द (हैदराबाद और सिकन्दराबाद) ने रबीउल-अव्वल 1426 हिजरी (अप्रैल 2005 ई॰) में एक मुहिम "हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* सबके लिए" शीर्षक से एक अभियान चलाया था। इस सिलसिले में मुस्लिमों और ग़ैर-मुस्लिमों की अनेक सामूहिक सभाओं का आयोजन किया गया। सभाओं में ग़ैर-मुस्लिमों में इस्लाम के बारे में जानकारी प्राप्त करने की बड़ी दिलचस्पी पाई गई। मुझे भी कुछ सभाओं को सम्बोधित करने का अवसर मिला। जिन बिन्दुओं को मैंने उन सभाओं में पेश किया था उनको कुछ और स्पष्टता

और प्रामाणिकता के साथ जन-सामान्य के लाभ के लिए लैखिक रूप में ले आया।

यह पुस्तक मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम दोनों में हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* और इस्लाम के परिचय के लिए सहायक हो सकती है। इसमें ऐसी संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित शैली अपनाई गई है जो आसानी से जनसाधारण की समझ में आ सके। अल्लाह इस कोशिश को क़बूल फ़रमाए। आमीन!

मुहम्मद रफ़ीउद्दीन फ़ारूक़ी
27 रमज़ान 1426 हि॰
(1 नवम्बर 2005 ई॰)

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* सम्पूर्ण मानव-जाति के लिए

कुछ मुसलमानों के चाल-चलन और कुछ दूसरों के प्रोपॅगण्डे के कारण यह ग़लत-फ़हमी लोगों में फैल गई है कि हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* इस्लाम के संस्थापक हैं, इस्लाम मुसलमानों का एक जातीय धर्म है और क़ुरआन उनकी जातीय एवं धार्मिक किताब है। इस कुधारणा से मुसलमानों और ग़ैर-मुस्लिम भाइयों के बीच एक अपरिचितता की दीवार खड़ी हो गई है, और जब तक इस दीवार को न तोड़ा जाए उस समय तक दोनों के मध्य ग़लत-फ़हमियाँ दूर नहीं हो सकतीं। सच्चाई यह है कि हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* इस्लाम के संस्थापक नहीं हैं बल्कि वे ईश-दूतत्त्व सिलसिले के अन्तिम सन्देष्टा (पैग़म्बर) हैं। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* ने भी उसी ईश्वरीय सत्य-धर्म को पेश किया, जिसको इससे पहले हज़रत आदम *(अलैहि॰)*, हज़रत नूह *(अलैहि॰)*, हज़रत इबराहीम *(अलैहि॰)*, हज़रत मूसा *(अलैहि॰)*, और हज़रत ईसा *(अलैहि॰)* ने विभिन्न देशों, कालखण्डों और भाषाओं में पेश किया था। इस प्रकार धर्म के सम्बन्ध में इस्लाम की धारणा के अनुसार सर्वधर्म सत्यम की कोई वास्तविकता नहीं बल्कि सत्य यह है कि सत्य-धर्म केवल एक ही है। क़ुरआन और हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* पर सम्पूर्ण मानवजाति का संयुक्त अधिकार है। बिल्कुल उसी प्रकार जिस प्रकार हवा, पानी और सूर्य-प्रकाश संसार के सभी इनसानों के लिए हैं, उनपर किसी का एकाधिकार नहीं है। अल्लाह सारी सृष्टि का पालनहार है और हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* सम्पूर्ण सृष्टि के लिए रहमत हैं।[1]

ईशदूतत्व (रिसालत) का इतिहास

ईशदूतत्व का इतिहास उतना ही पुराना है जितना पुराना स्वयं मानव-इतिहास है। दुनिया के पहले इनसान हज़रत आदम *(अलैहि॰)* को

[1] क़ुरआन; 3:19, 67, 83-85; 2:131-133; 10:84; 5:111; 46:9; 1:1; 21:107

अल्लाह ने आरम्भ ही में यह बात स्पष्टतः बता दी थी कि "देखो! हमारी हिदायतें अर्थात् मार्गदर्शन (किताबों और नबियों के रूप में) तुम्हारे पास आते रहेंगे। जो कोई उनकी पैरवी करेगा उसके लिए कभी कोई दुख व ग़म न होगा।" इन हिदायतों की शिक्षा हज़रत आदम *(अलैहि.)* ने अपनी सन्तान को दी और उनकी सन्तान ने अपनी सन्तान को दी। जब इनसानों की आबादी बढ़ी और वे विभिन्न क़बीलों और समुदायों में फैलने लगे तो फिर अल्लाह ने हर क़ौम में अपना पथ-प्रदर्शक और हर समुदाय में अपना सन्देष्टा (रसूल) भेजा। (क़ुरआनद्व 13:7; 35:24) और यह सिलसिला हजारों वर्ष तक चलता रहा। सभी पैग़म्बरों की दावत (आमन्त्रण) भाषाओं, समयकालों और स्थानों की भिन्नताओं और फ़ासलों के बावजूद एक ही थी। वह यह कि—

"ऐ क़ौम के लोगो! अल्लाह की बन्दगी (उपासना) इख़्तियार करो; उसके सिवा तुम्हारा कोई पूज्य नहीं।" (क़ुरआन, 7: 59, 65, 73, 85)

उन ईश-दूतों के आमन्त्रण पर बहुत कम लोग ईमान लाए और अधिकांश ने उसको मानने से इनकार कर दिया। अन्ततः उनको विभिन्न प्रकार की यातनाओं ने नष्ट-विनष्ट कर दिया। आद, समूद और लूत की क़ौमों की उजड़ी हुई बस्तियाँ आज भी संसार के विभिन्न भागों में उनकी विनष्टता की गवाही दे रही हैं। क़ुरआन ने हज़ारों वर्ष के ईश-दूतों के इतिहास को एक आयत (वाक्य) में इस प्रकार समेट दिया है—

> "हमने हर उम्मत में एक रसूल (सन्देष्टा) भेज दिया और उसके द्वारा सबको ख़बरदार कर दिया कि अल्लाह की बन्दगी (उपासना) करो और ताग़ूत (बढ़े हुए अवज्ञाकारी) की बन्दगी से बचो। इसके बाद उसमें से किसी को अल्लाह ने मार्ग दिखाया और किसी पर गुमराही डाल दी। फिर ज़रा ज़मीन में चल-फिरकर देख लो कि झुठलानेवालों का क्या अंजाम हो चुका है।" (क़ुरआन, 16:36)

ईश-दूतों की स्थिति

सारे-के-सारे सन्देष्टा मनुष्य ही थे। उनके भी बीवी-बच्चे थे। वे भी बाज़ारों में चलते-फिरते और खाते-पीते थे। वे परोक्ष के ख़ज़ानों के मालिक न थे। हानि-लाभ का अधिकार उनके पास न था। वे परोक्ष-ज्ञाता न थे। चमत्कार दिखाना उनके बस का काम न था और न ही वे किसी का मार्गदर्शन कर सकते थे। लेकिन अल्लाह ने उन्हें दूसरे इनसानों का मार्गदर्शन करने के लिए चुन लिया था। उनपर अल्लाह ने अपने आदेश और निर्देश अवतरित किए थे। वे लोगों के लिए अल्लाह के आदेशों की व्याख्या करते थे। अल्लाह के बाद सारे ईश-दूतों पर आस्था रखना और ईमान लाना और उनका अनुपालन करना सत्य-मार्ग पाने के लिए आवश्यक है। (कुरआन – 40:33, 34:25; 7, 20; 6:50; 13:38; 4:64,80; 16:44)

ईश-दूतों के साथ उनकी क़ौमों का व्यवहार

ईश-दूतों की क़ौम के लोगों ने प्रायः उनके साथ बड़ा बुरा व्यवहार किया। उनकी ज़िन्दगी में उनका मज़ाक़ उड़ाया, उनको झुठलाया, उनको जादूगर कहा, कवि (शायर), दीवाना और तान्त्रिक तक कहा। उनसे तरह-तरह के चमत्कार दिखाने की माँग की। उनको मारा-पीटा और घर से बेघर किया। यहाँ तक कि उनकी हत्या कर देने से भी नहीं डरे। (क़ुरआन–43:7; 21:41; 17:90,95; 69:41,42; 38:4; 19:46; 2:61)

पैग़म्बरों (ईश-दूतों) की मृत्यु के पश्चात भी उनपर अत्याचार किया। कुछ के व्यक्तित्व को इतना बढ़ाया-चढ़ाया कि उनको ईश्वरीय विशेषताओं का अधिकारी बना दिया। अत्याचारी क़ौमों ने किसी को ईश्वर का अवतार, किसी को ईश-पुत्र और किसी को ईश्वर बनाकर ईश्वरीय गुण उनसे सम्बन्धित कर दिए। (क़ुरआन – 4:171; 9:30)

कुछ समुदायों ने ईश-दूतों की लाई हुई किताबों को बदल डाला। उनमें भ्रमात्मक एवं निरर्थक बातें, अपना जातीय इतिहास, अपने दर्शन और मनघड़त धर्मादेश, वैध-अवैध के नए विधान और झूठी क़िस्से-कहानियाँ सम्मिलित कर दीं। इस प्रकार उन लोगों ने अल्लाह के

आदेशों और नियमों को खलत-मलत कर दिया। कुछ ने ईश्वरीय धर्म को छोड़कर बहुत सारे धर्म बना लिए। ख़ुद भी पथ-भ्रष्ट हुए और अपने बाद अनगिनत मानव-समुदायों की पथ-भ्रष्टता का कारण बने।

(क़ुरआन, 2:75; वर्तमान बाइबल का ऐतिहासिक प्रमाण देखिए।)

जब हम खोजबीन करके देखते हैं तो हमें पता चलता है कि पिछले ईश-दूतों की न तो किताबें सुरक्षित हैं और न ही उनके जीवन-चरित्रों का विशुद्ध इतिहास। उनसे सम्बन्धित जो भी वृत्तान्त हम तक पहुँचे हैं वे विरोधाभासी, भिन्नता-युक्त बिलकुल अप्रामाणिक हैं। इस प्रकार उनकी शिक्षाएँ भी अंधियारियों में खो गईं।

मुसलमान बिना भेदभाव के उन-सभी सन्देष्टाओं पर और किताबों पर ईमान (आस्था) रखते हैं, जो अल्लाह की ओर से संसार के विभिन्न समुदायों में विभिन्न कालखण्डों में मानव-उद्धार के लिए भेजे गए थे। लेकिन व्यावहारिक रूप में मुसलमान उन सभी संदेष्टाओं और नबियों का अनुसरण नहीं कर सकते। यह कोई पक्षपात के आधार पर नहीं बल्कि इसलिए कि उनकी शिक्षाएँ और जीवनियाँ सुरक्षित नहीं रहीं। अल्लाह की हिदायत और सत्य-मार्ग के लिए उन्हें अब विवशतः केवल क़ुरआन और हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* की ओर पलटना पड़ता है। इसलिए कि हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* पर अवतरित किताब अक्षरशः सुरक्षित है और उनका जीवन-चरित्र सभी सम्भावित प्रामाणिकता के साथ संग्रहीत है। (क़ुरआन, 2:136,285; 3:85; 15:9; 75:19).

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* की कुछ प्रमुख विशिष्टताएँ

सारे सन्देष्टाओं में अब हमें सत्य का, प्रामाणिक और विश्वसनीय मार्गदर्शन केवल हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ही के द्वारा मिल सकता है। इसके निम्नलिखित कारण हैं—

1. हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* अन्तिम सन्देष्टा हैं

प्रथम ईश-सन्देष्टा हज़रत आदम *(अलैहि.)* से लेकर अब तक जो ईश-दूतों के भेजने का सिलसिला चला आ रहा था वह हज़रत

मुहम्मद *(सल्ल॰)* की महान हस्ती पर समाप्त हो गया। अब आप *(सल्ल॰)* के बाद कोई और सन्देष्टा नहीं भेजा जाएगा, इसलिए आपको नबियों का समापक (अन्तिम नबी) कहा गया है। (क़ुरआन, 33:40) इसका उदाहरण आप *(सल्ल॰)* ने ऐसे दिया, जैसे किसी ने एक भवन बनाया हो और उसमें एक ईंट की जगह खाली छोड़ दी हो। लोग घूम-फिरकर देखते तो कहते कि क्या ही अच्छा होता कि इस ख़ाली स्थान को भर दिया जाता, तो वह अन्तिम ईंट मैं हूँ। (बुख़ारी, मुस्लिम) आप *(सल्ल॰)* ने कहा, "मेरे बाद कोई सन्देष्टा नहीं आएगा। (बैहक़ी, तबरानी)" यह बात चौदह सौ वर्ष पूर्व के इतिहास से भी प्रमाणित है कि हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* के पश्चात आज तक कोई हस्ती ऐसी नहीं आई कि जिसने ईश्वरीय ग्रन्थ के हामिल (धारक) होने का दावा किया हो और उसके अनुसार संसार में क्रान्ति लाई गई हो। यह सम्मान केवल हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* को प्राप्त हुआ है।

2. मुहम्मद *(सल्ल॰)* की शरीअत (धर्म-विधान) इस्लाम का अन्तिम संकलन है

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* चूँकि सन्देष्टाओं के समापक हैं, इसलिए जो धर्म आप (सल्ल॰) के माध्यम से दिया गया है वह भी आसमानी धर्म-विधानों का बिलकुल पूर्ण और अन्तिम है। अब तक अन्य सन्देष्टाओं को जो भी धर्म-विधान दिए गए थे, वे परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुसार थे। उनमें घट-बढ़ होता रहा है। लेकिन अब जो धर्म-विधान हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* के माध्यम से दिया गया है वह परिपूर्ण है। उसमें किसी प्रकार का संशोधन और परिवर्तन करने की गुंजाइश नहीं है। जिस चीज़ को स्पष्टतः इसमें वैध किया गया है वह क़ियामत (महाप्रलय) तक वैध है और जिसको अवैध किया गया है वह क़ियामत तक अवैध है। क़ुरआन और हदीस के विद्वानों या धर्म शास्त्रियों का कोई भी तर्क या मतैक्य इसे बदल नहीं सकता। जीवन से लेकर सामूहिक जीवन तक कोई पहलू ऐसा नहीं है जिसको इसकी परिधि में न लाया गया हो। यह धर्म अत्यन्त व्यापक और परिपूर्ण है

तथा सभी के लिए हर समय-काल में क़बिले-अमल (व्यावहार्य) है। नबी *(सल्ल.)* के अन्तिम हज के अवसर पर अल्लाह ने क़ुरआन की यह आयत उतारी –

> "आज मैंने तुम्हारे धर्म को तुम्हारे लिए पूर्ण कर दिया है और तुमपर अपनी नेमत पूरी कर दी है और तुम्हारे लिए इस्लाम को धर्म के रूप में स्वीकार कर लिया है।"
>
> (क़ुरआन 5:3)

3. हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* का आमन्त्रण सार्वभौमिक है

अब तक जितने भी पैग़म्बर भेजे गए थे उनका आमन्त्रण केवल उन्हीं की जातियों तक सीमित था। लेकिन अब हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* का सम्बोधन संसार के सभी समुदायों से है। चाहे उनका रंग, नस्ल, भाषा और वतन कुछ भी हो और किसी देश और किसी भी क़ौम से उनका सम्बन्ध हो। यही कारण है कि क़ुरआन में बार-बार "ऐ आदम की सन्तान" और "ऐ इनसानो" के शब्द आए हैं। क़ुरआन मजीद के द्वारा एलान हुआ–

> "ऐ नबी कहो कि ऐ इनसानो! मैं तुम सबकी ओर ईश्वर का दूत बना कर भेजा गया हूँ।" (क़ुरआन, 7 : 158)

दूसरे स्थान पर है कि हम ने आप को संसार के सारे इनसानों के लिए शुभ-सूचना देनेवाला और सचेत करनेवाला बना कर भेजा है। (क़ुरआन, 34:28) आप *(सल्ल.)* ने कहा– "मैं संसार के प्रत्येक काले और गोरे मनुष्य के लिए भेजा गया हूँ।" (मुसनद अहमद)

4. हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* का आमन्त्रण सदैव के लिए है

अब से पूर्व सभी सन्देष्टाओं का आमन्त्रण केवल तात्कालिक समुदायों और कालखण्डों तक ही सीमित था। लेकिन हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* का आह्वान और शिक्षाएँ क़ियामत तक आनेवाले सारे ही समयों के लिए हैं। क्योंकि इसमें ऐसे व्यापक और सार्वभौमिक

सिद्धान्त प्रस्तुत किए गए हैं जो प्रत्येक कालखण्ड और सभी देशों के इनसानों के लिए व्यावहारिक हैं। क़ुरआन में है—

> "और यह क़ुरआन मेरी ओर वह्य (प्रकाशना) के द्वारा भेजा गया है ताकि तुम्हें और जिस-जिस को यह पहुँचे, सबको सचेत कर दूँ।" (क़ुरआन, 6:19)

यह भी एक तथ्य है कि हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* से पूर्व ईश-दूतों को जो चमत्कार दिए गए थे वे केवल उन्हीं के कालखण्डों तक सीमित थे। लेकिन हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* को जो ज्ञानात्मक और बौद्धिक चमत्कार क़ुरआन मजीद के रूप में दिया गया है वह क़ियामत (महाप्रलय) तक शेष रहनेवाला है। यह भी आप *(सल्ल.)* के आमन्त्रण के विश्वव्यापी और सार्वकालिक होने का प्रमाण है। (क़ुरआन 52:33-34, 11:13-14; 17:88; 10:38, 2:23)

5. हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* पर अवतरित किताब सुरक्षित है

क़ुरआन अल्लाह की ओर से अवतरित अन्तिम किताब यानी अल्लाह का कलाम (Words of God) है, जो हर तरह की मिलावट और हर कमी-बेशी से मुक्त और सुरक्षित है। अल्लाह ने फ़रमाया है—

> "इस ज़िक्र (क़ुरआन) को हमने उतारा है और इसके रक्षक हम स्वयं हैं।" (क़ुरआन, 15:9)

जिस अरबी भाषा में वह उतरा था, उसी भाषा में वह आज भी मौजूद है जो एक जीवित-भाषा है। जिसको करोड़ों इनसान आज भी मातृ-भाषा की हैसियत से बोलते हैं और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर वह जन-सम्पर्क की भाषा है। क़ुरआन की वजह से अरबी-भाषा उसी स्तर पर शेष है, जिस पर वह क़ुरआन के अवतरण काल में थी। उसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

- क़ुरआन मजीद की सुरक्षा का प्रबन्ध स्वयं हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के जीवन-काल में हो चुका था। आप *(सल्ल.)* ने उसको लिखवाया और आप *(सल्ल.)* के ही जीवनकाल में आपके अनेक साथियों

(सहाबा) ने क़ुरआन को अक्षरशः याद कर लिया था। आप *(सल्ल.)* के बाद ख़लीफ़ाओं (प्रतिनिधियों) ने सरकारी स्तर पर इसके प्रचार-प्रसार का काम किया। हर साल रमज़ान के महीने में रात की नमाज़ (तरावीह) में इसको पूरा सुनने और सुनाने का प्रचलन हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के समय से नस्ल दर नस्ल आज तक जारी है। इस प्रकार यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि क़ुरआन के अवतरण से लेकर आज तक इसमें किसी प्रकार का कोई परिवर्तन या परिवर्धन नहीं हुआ।

- क़ुरआन मजीद अपनी भाषा-शैली, विषयों की व्यापकता और प्रभावकारी वाणी की दृष्टि से एक चमत्कार है। इसका यह चैलेंज है कि कोई इस जैसा कलाम बनाकर लाए।

(क़ुरआन, 52:33, 34; 2:23)

- क़ुरआन पिछली किताबों (तौरात, इंजील, ज़बूर आदि) को प्रमाणित करता है। उनमें वर्णित शिक्षाओं का सारांश इसमें आ गया है। इस दृष्टि से यह उनकी रक्षा भी करता है और पिछले नबियों की उम्मतें (समुदाय) जिन विभेदों में पड़कर गुमराह हुई हैं उन विभेदों को यह जड़ से समाप्त करनेवाला भी है। (क़ुरआन, 3:3; 5:48; 16:64)

- क़ुरआन मानवजाति के लिए पूर्णतः मार्गदर्शन और अनुस्मृति है। सत्य और असत्य के अन्तर को स्पष्ट करनेवाला है। अच्छी बातों के उपदेशों से परिपूर्ण है। क़ुरआन का वर्णन सत्यता और प्रामाणिकता पर आधारित है। इसकी हर बात अटल है। यही कारण है कि असत्य किसी भी दिशा से इसपर आक्रमण नहीं कर सकता। आज तक कोई शोध या रिसर्च इसकी किसी बात को ग़लत साबित नहीं कर सकी। क़ुरआन मजीद में बार-बार सूझ-बूझ और बुद्धि के प्रयोग पर बहुत बल दिया गया है।[1]

---

[1] क़ुरआन, 2:185; 10:57, 108/54, 17,32; 41:41-42; 4:174, 3:190; 7:179

- क़ुरआन मजीद में जीवन व्यतीत करने के ढंग का वर्णन आवश्यक विस्तार के साथ कर दिया गया है। इसमें सम्पूर्ण मानवजाति के लिए पथ-प्रदर्शन और उपदेश है। इसके विषयों में व्यापकता है। यह किताब बताती है कि इस सृष्टि का बनानेवाला, स्वामी और शासक कौन है? और सृष्टि में मनुष्य की सही स्थिति क्या है? पूज्य-प्रभु केवल एक है, इस तथ्य को इसमें स्पष्ट कर दिया गया है और इसके साथ ही इसमें बहुदेववाद की निन्दा की गई है। पिछली क़ौमों के वृत्तान्तों से शिक्षा लेना सिखाया गया है। आख़िरत (परलोक) की सूचनाएँ दी गई हैं। अच्छे लोगों के लिए जन्नत (स्वर्ग) की शुभ-सूचना है। बुरे काम करनेवालों के लिए जहन्नम (नरक) का डरावा है। मानवजाति के नैतिक गुणों को सुधारने और सँवारने की बातें बयान की गई हैं। उपासना के तरीक़े बताए गए हैं। सामाजिक जीवन के प्रति अधिकारों और कर्तव्यों का विस्तृत विवरण है। खाने-पीने में वैध-अवैध के स्पष्ट आदेश दिए गए हैं। आजीविका और रोज़ी कमाने की वैध-अवैध सीमाओं का वर्णन किया गया है। राजनीति में अल्लाह के सम्प्रभुत्व, मानव-समानता और न्याय तथा इनसाफ़ को महत्त्व दिया गया है। अदालत (न्यायपालिका) में दीवानी और फ़ौजदारी नियमों का सविस्तार वर्णन है। युद्ध और सन्धि तथा अन्तर्राष्ट्रीय-विधानों के सिद्धान्त दिए गए हैं।

- क़ुरआन मजीद की वर्णन-शैली दूसरी सभी किताबों से पृथक है। क्योंकि इसका अवतरण विशेष परिस्थिति में हुआ है। इसमें आमन्त्रण और आन्दोलन है। इसमें मानव-जीवन से सम्बन्धित तमाम बातें सन्दर्भ एवं प्रसंगानुसार आती रहती हैं और इसमें जगह-जगह पर बाह्य जगत् के साथ मनुष्य के अन्तर एवं बाह्य वातावरण से प्रमाण प्रस्तुत किए गए हैं। मानव-इतिहास की महत्वपूर्ण घटनाओं से शिक्षा लेने की बात कही गई है और उदाहरण देकर समझाया गया है। (क़ुरआन, अश्शूरा

42:7; अल-अम्बिया 21:10; अल-बक़रा 2:208; अन्नहल 16 : 89) क़ुरआन में है–

"वास्तविकता यह है कि यह क़ुरआन वह मार्ग दिखाता है, जो बिलकुल सीधा है। जो लोग इसपर ईमान लाकर (इसके अनुसार) अच्छे काम करने लगें, उन्हें यह शुभ-सूचना देता है कि उनके लिए बड़ा अज्र (बदला) है।" (क़ुरआन, 17:9)

6. हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के जीवन-चरित्र का सम्पूर्ण रिकार्ड सुरक्षित है

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के बाद आप *(सल्ल.)* के साथियों (सहाबा *रज़ि.*) ने और इनके बाद के महापुरुषों ने यथासम्भव विशुद्धता के साथ आप *(सल्ल.)* के कथनों और आचरणों को सविस्तार सुरक्षित कर लिया था। हदीसों की रिवायतों (नबी *सल्ल.* की बातों) को जाँचने-परखने के नियम बनाए गए, जिसकी वजह से हमें हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के व्यक्तित्व और उनके दौर की परिस्थितियों को पूर्ण प्रामाणिकता के साथ जानने में किसी प्रकार की कठिनाई महसूस नहीं होती। यह रिकार्ड हमें हदीस की किताबों[1] में मिलता है। इस प्रकार क़ुरआन, आपके वचन (हदीस) और जीवनवृतान्त आप*(सल्ल.)* की शिक्षाओं का मौलिक और प्रामाणिक स्रोत हैं। इसलिए आप *(सल्ल.)* ने कहा है कि "मैं तुम्हारे मध्य दो चीज़ें छोड़े जा रहा हूँ, यदि तुम उन्हें मज़बूती से थामे रहोगे तो कभी भी गुमराह (पथभ्रष्ट) नहीं होगे– एक अल्लाह की किताब और दूसरे उसके रसूल की सुन्नत यानी तरीक़ा। (मुवत्ता)

7. हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* इस्लामी सभ्यता के नव-निर्माता हैं

- हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने दीने-इस्लाम का केवल प्रचार-प्रसार ही नहीं किया बल्कि उसको स्थापित करके एक सम्पूर्ण सभ्यता का

[1] मुवत्ता, बुख़ारी, मुस्लिम, इब्ने-माजा, नसई, अबू-दाऊद और इस्लामी इतिहास की किताबों तथा सीरते-वाक़दी, इब्ने-हिशाम आदि।

निर्माण किया। आप *(सल्ल.)* ने संसार के सामने अपनी प्रस्तुत की हुई शिक्षाओं के अनुरूप एक जीते-जागते इस्लामी-समाज को अस्तित्व में लाकर दिखा दिया मानव-इतिहास की यह सबसे बड़ी और पूर्ण क्रान्ति थी।

- हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने 23 वर्ष की एक छोटी-सी अवधि में एक पूरी क़ौम के विचार, दृष्टिकोण और सामाजिक जीवन को बदलकर रख दिया। इस्लाम के नाम से एक नई सभ्यता अरब प्रायद्वीप से निकल कर सीरिया, स्पेन, मिस्र, फ़ारस, भारत आदि देशों और पूर्व दिशा में दूर-दूर तक फैल गई। जब तक मुसलमान प्रत्येक क्षेत्र में क़ुरआन और हदीस के प्रकाश में अनुसन्धान से काम लेते रहे उस समय तक धार्मिक और प्राकृतिक ज्ञान-विज्ञान में ये अपने समय की नायक क़ौम के रूप में थे। जीवन व्यतीत करने का ढंग, उद्योग, व्यापार, राजनीति और प्रशासनिक क्षमता तथा निर्माण-कार्य अर्थात जीवन के सभी विभागों में मुसलमानों ने अपने आदर्श जीवन चरित्र से एक वैयक्तिक पहचान बनाई।

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* की ये कुछ विशिष्टताएँ हैं जो किसी और व्यक्तित्व में नहीं पाई जातीं।

छठी शताब्दी ईसवी में अरब प्रायद्वीप की स्थिति

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* से पहले सारा संसार (भारत, फ़ारस, यूनान और मिस्र सहित) नास्तिकता, बहुदेववाद और सभी प्रकार की सामाजिक, नैतिक और आर्थिक बुराइयों में पड़ा हुआ था। कोई क़ानून नहीं था। अत्याचार और उपद्रवों का दौर-दौरा था। क़ुरआन मजीद ने इस परिस्थिति को सारगर्भित रूप में इस प्रकार वर्णित किया—

> "जल और थल में इनसानों की अपनी हाथों की कमाई के कारण फ़साद (बिगाड़) फैल गया है।" (क़ुरआन, 30:41)

- उस ज़माने में ईश्वर का इनकार करनेवाले नास्तिक और अधर्मी भी थे और एक ईश्वर के साथ बहुत सारे देवी-देवताओं को माननेवाले

बहुदेववादी भी थे। हर प्रकार का बहुदेववाद (शिर्क) संसार में प्रचलित था। हज़रत नूह *(अलैहि.)* के समय के बहुत सारे झूठे देवी-देवता जैसे वद्द, सुवाअ, यग़ूस, यऊक़ और नस्र मूर्तियों की शक्ल में विभिन्न समुदायों (क़बीलों) में पूजे जाते थे। बअल, लात, उज़्ज़ा और मनात अरब के बहुत मशहूर बुत थे। अरबवालों ने सफ़ा और मरवा नामक पहाड़ियों पर और स्वयं ख़ान-ए-काबा में सैकड़ों मूर्तियाँ बिठा रखी थीं। काबा के भीतरी-भाग में हज़रत इबराहीम *(अलैहि.)* और इसमाईल *(अलैहि.)* के चित्र बना रखे थे। उनका कहना और मानना था कि ईश्वर तक पहुँच इन मूर्तियों के द्वारा ही हो सकती है। मूर्तियों की प्रसन्नता के लिए बहीरा, साइबा, वसीला और हाम नामक पशुओं को पुण्य के लिए छोड़ देते थे। मूर्तियों से मन्नतें माँगी जातीं और चढ़ावे चढ़ाए जाते थे। उनके स्थानों पर जानवरों की बलि चढ़ाई जाती थी और उनका मांस और ख़ून काबा की दीवारों पर लगाया जाता था। उनकी आस्था और मान्यता थी कि ये मूर्तियाँ ईश्वर के समक्ष उनकी सिफ़ारिश करनेवाली हैं। फ़रिश्तों को उन्होंने ईश्वर की बेटियाँ बना रखी थीं। नक्षत्रों और सितारों की भी पूजा करते थे। इस चहुँमुखी बहुदेववादिता ने उन्हें अन्धविश्वासी, फ़ाल और शगुन लेनेवाला बना दिया था। बहुदेववाद के लिए उनके पास कोई प्रमाण इसके अतिरिक्त नहीं था कि उन्होंने अपने पूर्वजों को ऐसा ही करते पाया है।[1]

- बहुदेववादी रीति-रिवाज ही उनकी इबादत थी। अल्लाह के घर काबा के पास उनकी इबादत क्या थी? तालियाँ पीटना और सीटियाँ बजाना। निर्वस्त्र होकर परिक्रमा करते। बीतते समय के साथ हज के कृत्य केवल मेले और यात्राओं में परिवर्तित हो कर रह गए थे। इसमें बाज़ार लगते, क़िस्से, कहानियाँ सुनाई जातीं, कवि सम्मेलन होते और अपने पूर्वजों के कारनामे गर्व से सुनाए जाते।[2]

---

[1] क़ुरआन– 5:90,

103; 10:18; 16:57; 21:52-53; 22:37; 23:37; 30:13; 36:18,

19/45; 24; 53:19; 52:20, 29, 49; 61:125; 71:23

[2] क़ुरआन, 8:35; 7:31; 2 : 220

- वैध और अवैध ठहराने के काम को उन्होंने अपने हाथों में ले रखा था। जिस चीज़ को चाहते और जिसके लिए चाहते हलाल या हराम ठहरा लेते। अल्लाह पर झूठ गढ़ते। मृत-पशु, रक्त, सूअर और अल्लाह के अतिरिक्त देवी-देवताओं के नाम पर बलि चढ़ाए हुए जानवर तक खा जाते।[1]
- बेटों के लिए तो अल्लाह से दुआएँ (प्रार्थनाएँ) करते लेकिन जब अल्लाह उन्हें बेटे प्रदान कर देता तो फिर वे बहुदेववादी नीति अपना लेते। निर्धनता के भय से अपनी औलाद को भी मार डालते। बेटी पैदा होती तो शर्म के मारे सिर झुक जाता और चेहरे पर कलौंस छा जाती। उनमें इतने अधिक निर्दयी और पत्थर दिल लोग भी थे जो बच्चियों को जीवित ज़मीन में गाड़ देते थे।[2]
- शादी-ब्याह की कोई सीमा निश्चित नहीं थी और न ही रिश्ते-नाते के सम्मान का कोई ख़याल था। जिस स्त्री से बाप ने विवाह किया उसी से स्वयं विवाह कर लेना और दो सगी बहनों को एक साथ अपनी पत्नी बना लेना उनकी दृष्टि में कोई ऐब की बात न थी। पत्नियों से 'ज़िहार' करते अर्थात् पत्नी को माँ की तरह हराम (अवैध) ठहरा लेते और बार-बार तलाक़ देते। औरतों के अधिकारों का हनन करते। निकटतम् नातेदारी का भी कोई ख़याल नहीं रखते थे। शराब के रसिया थे। बे-परदगी का चलन सामान्य था। व्यभिचार तो मानो उनके निकट कोई पाप ही न था। निर्लज्जता और अश्लीलता उनमें रची-बसी थी। पड़ोसियों को सताते; निर्धन ग़रीब, मुहताज और असहायों की सहायता न करते। शाइरी, क़िस्से-कहानियों का सुनना-सुनाना और गाना-बजाना उनकी दिनचर्या थी।[3]

---

1 क़ुरआन, 16:115, 116

2 क़ुरआन, 7:189, 199; 17:31; 16:58-59; 81:7, 8, 9

3 4 : 1, 3, 22, 23, 36 / 33 : 4, 33 / 5 : 90 / 17 : 32 / 6 : 151 / 89 : 17-20 / 31:6 / 53 : 60, 61।

- यतीमों और अनाथों का माल खा जाते। बुज़ुर्गों द्वारा छोड़ी गई सम्पत्ति (मीरास) हड़प कर लेते। पाँसे डालते, जुआ खेलते। ब्याज को व्यापार बताते। नौकरानियों से वैश्यावृत्ति कराते। अवैध तरीक़ों (धोखा-धड़ी, फ़रेब और जाल-साज़ी) से माल कमाते। अमानत में ख़ियानत करते। माल की मुहब्बत में बुरी तरह गिरिफ़्तार थे। माल और औलाद की प्रचुरता और फ़ुज़ूलख़र्ची पर गर्व करते और दीन-दुखियों को तथा ईश-मार्ग में दान देने में कंजूसी करते।[1]
- हज और उमरा के चार महीनों (ज़ी-क़ादा, ज़िलहिज्जा, मुहर्रम और रजब) के अतिरिक्त अमन-चैन न था। मूर्खतापूर्ण और सामुदायिक पक्षपात में डूबे हुए थे। बदले की भावना के कारण नस्ल-दर-नस्ल जंगों का सिलसिला वर्षों तक चलता रहता। ज़ुल्म और अत्याचार का बोलबाला था। रातों को हमला करके किसी की भी धन-सम्पत्ति लूट लेते थे और दिन-दहाड़े लोग उचक लिए जाते थे। उन्हें ग़ुलाम बना लिया जाता। खुले-आम लोगों का क्रय-विक्रय होता। वादा ख़िलाफ़ी करते और अपनी प्रतिज्ञा तोड़ दिया करते। युद्ध और सन्धि के कोई नियम नहीं थे। क़ैदियों के साथ दुर्व्यवहार किया जाता था। क़िसास (क़त्ल का बदला) लेते समय बदले की भावना के आवेग में इनसानियत की सीमा लाँघ जाते। युद्ध में पराजितों की धन-सामग्री अवैध रूप से लूट ली जाती थी, जिसके जो हाथ लगता वह उसका हक़दार समझा जाता था। (क़ुरआन, 9, 36 / 100 : 1 से 6 / 29:67 / 17:33)

अरब क़ौम की क्रान्तिकारी विशिष्टताएँ

साधारणतया केवल अरब समुदाय की अज्ञानता और उनकी सामाजिक और नैतिक बुराइयों को ही उत्कृष्ट रूप में बयान किया जाता है। लेकिन उनकी अन्य विशिष्टताओं और ख़ूबियों की ओर कम ही ध्यान दिया जाता है।

[1] क़ुरआन, 100 : 8 / 4 : 29, 30, 37 / 24 : 33 / 74 : 11 से 30

- हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* की पैदाइश के समय अरब एक जंगलवासी और आज़ाद क़ौम थे। वे किसी के ग़ुलाम और शासित न थे। किसी सभ्यता की उनमें छाप न थी। उनके जीवन में सादगी थी। वे भोग-विलास, आडम्बर और कृत्रिमता से अनभिज्ञ थे। बंजारों का जीवन जीना, पशुपालन, खेती-बाड़ी और व्यापारिक यात्राओं के कारण मेहनती और परिश्रमी थे। उनमें वीरता और आगे बढ़ने की लगन थी। घुड़सवारी के साथ-साथ वे तलवारों और नेज़ों (भालों) से मुक़ाबला करने में निपुण थे। परिणाम से निश्चिन्त होकर ख़तरों में कूद पड़ते थे।
- कुछ नैतिक गुण भी थे जैसे दानशीलता, आतिथ्य-सत्कार, रिश्ते-नातों को जोड़े रखना इत्यादि। आमतौर से दिल के साफ़ और धुन के पक्के थे। अज्ञानकाल में भी उनके दिलों में काबा के प्रति सम्मान और प्रतिष्ठा थी। हज़रत इबराहीम *(अलैहि.)* का सम्मान करते और उनको अपना इमाम (सरदार) मानते थे। पिछले ईश-दूतों के क़िस्से-कहानियों से भी कुछ न कुछ अवगत थे। हिजाज़ अर्थात् मक्का और मदीना भौगोलिक दृष्टि से उस समय संसार में केन्द्रीय महत्व रखते थे।
- उनकी अरबी भाषा संसार की अन्य भाषाओं की तुलना में शब्द-भण्डार, सार्थकता, सरसता, वर्णनशैली और प्रभावशीलता आदि दृष्टि से अद्वितीय थी।

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* का संक्षिप्त जीवन परिचय

- हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* की वंशावली हज़रत इबराहीम *(अलैहि.)* से जाकर मिल जाती है। आपका सम्बन्ध अरब के प्रसिद्ध क़बीला क़ुरैश से था। आप (सल्ल॰) के ख़ानदान में सदैव से ख़ान-ए-काबा की ख़िदमत की परम्परा चली आ रही थी। आप (सल्ल॰) के पिता का नाम अब्दुल्लाह और दादा का नाम अब्दुल मुत्तलिब था।

- हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* 22 अप्रैल 571 ई॰ को मक्का में पैदा हुए। आपके जन्म से पूर्व ही आपके पिता की मृत्यु हो गई थी। अभी आप छः वर्ष के ही थे कि आपकी माँ बीबी आमिना का भी देहान्त हो गया। आठ वर्ष की उम्र तक आपका पालन-पोषण आपके दादा जी अब्दुल मुत्तलिब ने किया। आपके दादा की मृत्यु के बाद आप के चाचा अबू-तालिब ने आपको बड़े लाड-प्यार से पाला-पोसा। कम उम्र में ही चाचा जी के साथ आपने सीरिया देश की व्यापारिक यात्रा की। युवावस्था में एक ऐसे समझौते में शामिल रहे, जो समस्त क़बीलों के बीच अत्याचार के ख़िलाफ़ पीड़ित की हिमायत का समझौता (हलफ़ुल्-फ़ुज़ूल) था। मक्का की एक धनवान औरत हज़रत ख़दीजा का व्यापारिक सामान लेकर क़ाफ़िले के साथ सीरिया (देश) गए। सफल व्यापारिक यात्रा से लौटने के बाद पच्चीस वर्ष की अवस्था में हज़रत ख़दीजा *(रज़ि.)* से विवाह हुआ।

- आप *(सल्ल.)* उत्तम चरित्र और नैतिकता के स्वामी थे। आपको स्वाभाविक रूप से मूर्ति-पूजा, मदिरापान, बदकारी और नाच-गानों जैसी फ़ुज़ूल चीज़ों, यहाँ तक कि अन्याय और अत्याचार से सख़्त नफ़रत थी। आप *(सल्ल.)* लोगों के काम आते और उनकी कठिनाइयों को दूर करते। लोग आपकी बुद्धिमत्ता और समझदारी पर भरोसा करते थे तथा अपने आपसी मतभेदों का फ़ैसला आप *(सल्ल.)* से कराते। समाज में आप *(सल्ल.)* सम्मान की दृष्टि से देखे जाते थे।

उच्च सच्चरित्रता के कारण लोगों ने आप *(सल्ल०)* को सादिक़ यानी सत्यनिष्ठ और अमीन यानी अमानतदार की उपाधि दे रखी थी।

- हज़रत मुहम्मद *(सल्ल०)* जब चलीस वर्ष के हुए तो अल्लाह ने आप (सल्ल०) पर क़ुरआन अवतरित किया और अपना सन्देष्टा बनाकर सम्पूर्ण मानवजाति की ओर भेजा। आप *(सल्ल०)* ने 'ला-इला-ह इल्लल्लाह' यानी "अल्लाह के अतिरिक्त कोई उपासना योग्य नहीं" के आमन्त्रण से काम का आरम्भ किया। हिकमत (अत्यन्त सूझबूझ) के साथ आप *(सल्ल०)* ने पहले अपने अति निकटतम नातेदारों और मित्रों को इस्लाम से परिचित कराया, फिर आम लोगों को इस्लाम की तरफ़ आमन्त्रित किया। सुहृदय लोगों ने उस आमन्त्रण को स्वीकार कर लिया। उनमें समाज के धनवान भी थे और निर्धन (दास-दासियाँ) भी। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल०)* ने मुसलमानों का शिक्षण-प्रशिक्षण किया। उनका चरित्र सँवारा और उनके अन्दर अनुशासन (सुनें और करें का गुण) पैदा किया। उनको विश्वव्यापी मिशन के आमन्त्रणकर्ता की हैसियत से तैयार किया, ताकि वे सत्य-असत्य के संघर्ष में अडिग रहें और सत्य के वर्चस्व के लिए अपनी जान तक लड़ा दें।

- दूसरी तरफ़ जिन लोगों ने इस आमन्त्रण को स्वीकार करने से इनकार किया वे विरोध करने पर डट गए। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल०)* का उन्होंने उपहास किया। आप *(सल्ल०)* को कवि, जादूगर, तान्त्रिक और मजनूँ कहा। आप *(सल्ल०)* से सौदेबाज़ी का प्रयत्न किया गया। धन-दौलत, हसीन औरतों और सरदारी का लालच दिया गया। लेकिन आप *(सल्ल०)* ने उनसे कहा, "अगर तुम मेरे एक हाथ में सूर्य और एक हाथ में चन्द्रमा भी लाकर रख दोगे तब भी मैं इस्लाम की ओर बुलाने का काम नहीं छोड़ सकता, यहाँ तक कि इस्लाम का बोलबाला हो जाए या मेरी जान इसी मिशन में खप जाए।" जब विरोधियों ने देखा कि इस प्रकार बात नहीं बनेगी, तो उन्होंने आप *(सल्ल०)* के साथियों पर घोर अत्याचार और ज़ुल्म ढ़ाना शुरू कर दिया। उनको तरह-तरह से सताया। मारा-पीटा, तपती हुई

रेत और दहकते अंगारों पर लिटाया। कुछ तो उनके हिंसक ज़ुल्म से शहीद हो गए। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* ने अपने साथियों को हाथ रोके रखने और धैर्य एवं सहनशीलता से काम लेने का उपदेश दिया। अन्ततः उनकी एक बड़ी संख्या अत्याचारों से तंग आकर मक्का शहर छोड़कर हबशा देश को चले जाने पर विवश हो गई। इसके बाद हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* को उनके ख़ानदानवालों के साथ तीन वर्ष (शेबे-अबी-तालिब नामक घाटी में) बन्धक बनाकर रखा गया और कठोरतापूर्ण सामाजिक और आर्थिक बहिष्कार किया गया। इस चरण के बाद मक्का में इस्लाम के प्रचार-प्रसार के रास्ते व्यवहारतः बन्द हो चुके थे। आप *(सल्ल॰)* बड़ी उम्मीदें लिए हुए पड़ोसी बस्ती (ताइफ़) में इस्लाम का आमन्त्रण लेकर गए। लेकिन उन अभागे लोगों ने भी आपके साथ अच्छा बर्ताव नहीं किया, बल्कि पत्थर मार-मारकर आप *(सल्ल॰)* को लहूलुहान कर दिया। इसके बाद भी आप *(सल्ल॰)* ने उनके हक़ में बद्दुआ नहीं की, बल्कि यह आशा जताई कि इनकी आनेवाली नस्लें इस्लाम अवश्य स्वीकार कर लेंगी। आप *(सल्ल॰)* मक्का वापस लौट आए। इसी ज़माने में आप *(सल्ल॰)* को 'मेराज' (ईश्वर से मुलाक़ात) का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पाँच नमाज़ें अनिवार्य (फ़र्ज़) हुईं और इस्लामी समाज का विधान प्रदान किया गया। इसके बाद आप *(सल्ल॰)* ने हज और उमरा के लिए आनेवाले बाहरी क़बीलों (समुदायों) से सम्बन्ध बनाना आरम्भ कर दिया। अन्ततः मदीना वासियों ने तन-मन-धन से आप *(सल्ल॰)* का साथ देने का वचन दिया और आपको ईश-दूत (नबी) तथा अपने क़ाइद (नेतृत्त्व करनेवाला, मार्गदर्शक) की हैसियत से मदीना आने का आमन्त्रण दिया। इस प्रकार नुबुव्वत (ईशदूतत्व) के एलान के तेरह वर्ष बाद हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* ने अल्लाह पर भरोसा करते हुए हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि॰)* के साथ मक्का को त्याग कर मदीना को हिजरत की।

मदीना पहुँच जाने के बाद हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* ने सबसे पहले मस्जिद की बुनियाद रखी और अनसार तथा मुहाजिरों के बीच भाई-चारे का सम्बन्ध स्थापित किया। वहाँ के यहूदियों के साथ आपने समझौता

(मीसाक़े-मदीना) किया और आस-पास के दूसरे क़बीलों से भी रक्षात्मक समझौते किए गए। मदीना की सुरक्षा के लिए गश्त लगाने (पैट्रोलिंग) की शुरुआत की गई। बढ़कर किए गए इन कामों से मदीने में एक विधिवत राज्य की नींव पड़ गई। मक्का के कुरैशियों ने आप *(सल्ल.)* की शत्रुता में का मोर्चा सोल दिया। बद्र की लड़ाई, उहुद की लड़ाई और अहज़ाब की लड़ाइयाँ मुसलमानों पर थोप दी गईं। लेकिन अल्लाह की मदद हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के साथ रही। मदीना में निवास के छठवें साल हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने चौदह सौ सहाबा *(रज़ि.)* के साथ उमरा करने के लिए मक्का के लिए प्रस्थान किया। मक्का के इस्लाम-विरोधी क़ुरैशियों ने आप *(सल्ल.)* को मक्का से बाहर ही रोक दिया। बड़ी लम्बी बात-चीत के बाद हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने शान्ति स्थापित करने के लिए बड़ी सूझ-बूझ और दूर अन्देशी से क़ुरैश की प्रस्तुत की हुई शर्तों पर सुलह (सुलह-हुदैबिया) कर ली। इस समझौते से परिस्थितियाँ बदलने लगीं। एक लाभ यह हुआ कि मक्का और मदीने के लोगों के बीच आने-जाने का सिलसिला शुरू हो गया। शान्ति स्थापित हो जाने के साथ ही आप *(सल्ल.)* ने इस्लाम का प्रचार-प्रसार अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आरम्भ कर दिया। क्योंकि आप *(सल्ल.)* सारे संसार के लिए सन्देष्टा बनाकर भेजे गए थे। आप (सल्ल.) ने ईरान रूम और मिस्र के बादशाहों और दूसरे शासकों के नाम इस्लामी आमन्त्रण-पत्र अपने विशेष दूतों के द्वारा भिजवाए। इस सन्धि के दो वर्ष बाद क़ुरैशवालों ने अपनी सन्धि भंग कर दी तो हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने दस हज़ार सहाबा *(रज़ि.)* के साथ बिना किसी रक्त-पात के मक्का पर (8 हिजरी में) विजय प्राप्त की और सब को माफ़ कर दिया इसके तुरन्त बाद ताइफ़ और हुनैन की लड़ाइयाँ हुईं। इनमें हज़ारों शत्रु बन्दी बनाए गए किन्तु बाद में आप *(सल्ल.)* ने उन सबको को आज़ाद कर दिया। इन लड़ाइयों में जो सामग्री हाथ लगी सब वहीं नौमुस्लिमों में उनकी दिलजोई के लिए वितरित कर दी। इसके बाद लोग इस्लाम में गिरोह के गिरोह दाख़िल होने लगे।

अन्तिम दौर में रोम के राजा हिरक़्ल के आक्रमण की सूचना मिली तो आप *(सल्ल.)* सख़्त गर्मी और अत्यन्त अल्प युद्ध-सामग्री की

स्थिति में ही तबूक की ओर निकल पड़े। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के रौब से प्रभावित होकर शत्रु ने युद्धक्षेत्र से अपनी सेनाएँ हटा लीं और युद्ध नहीं हुआ। आप *(सल्ल.)* कुछ दिनों तक वहाँ ठहरे रहे। इस दौरान उत्तरी अरब के अनेक क़बीलों ने मदीना-राज्य की अधीनता स्वीकार कर ली। इस प्रकार आप *(सल्ल.)* विजयी होकर मदीना लौट आए।

स्वर्गवास से तीन महीने पहले हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने अन्तिम हज किया। इसमें एक लाख से अधिक सहाबा *(रज़ि.)* शामिल हुए थे। आप *(सल्ल.)* ने अपने अन्तिम ख़ुतबे (अभिभाषण) में ये महत्वपूर्ण बातें लोगों के समक्ष रखीं।

- भाषा, रंग और नस्ल के भेद-भाव को समाप्त करके मानव-समानता का उपेदश दिया।
- मानवाधिकारों (विशेष रूप से औरतों और दास-दासियों के अधिकारों) को अदा करने का आदेश दिया।
- अज्ञानकाल के सभी बुरे रीति-रिवाजों को समाप्त करने का एलान किया।
- आपसी मामलों और सम्बन्धों को ठीक रखने पर ज़ोर दिया।
- सूद (ब्याज) की अवैधता यानी उसके हराम होने का एलान किया।
- बार-बार मुसलमानों का ध्यान आकर्षित किया कि अपने कथनों और व्यवहार से सत्य की गवाही देने के कर्तव्य का पालन करते रहें।
- अन्त में पथभ्रष्टता से बचने के लिए क़ुरआन और अपनी सुन्नत को मज़बूती से पकड़े रहने की वसीयत की।

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* का जब देहान्त हुआ तो पूरा अरब प्रायद्वीप इस्लाम के शासनाधीन हो गया था। आप *(सल्ल.)* का देहान्त 63 वर्ष की आयु में सितम्बर 632 ई. में हुआ और मदीना ही में दफ़्न किए गए। बेशुमार दुरूद और सलाम हों हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के पवित्र एवं महान व्यक्तित्व पर। आप *(सल्ल.)* के बाद आपके प्रशिक्षित सहाबा *(रज़ि.)* ने आप *(सल्ल.)* के मिशन को जारी रखा। (अल्लाह उनसे राज़ी (प्रसन्न) हो और वे अल्लाह से।)

ईशदूतत्वकाल के युद्ध

सैद्धान्तिक रूप से यह बात जान लेनी चाहिए कि इस्लाम मानव-समानता और मानवीय सम्मान का ध्वजावाहक है। इस्लाम में बिना किसी धार्मिक तथा जातीय भेदभाव के प्रत्येक मानव का प्राण सम्माननीय है। क़ुरआन मजीद में है–

> "जिसने किसी एक मनुष्य को क़त्ल के बदले या ज़मीन में बिगाड़ फैलाने के सिवा किसी और कारण से क़त्ल किया, उसने मानो सारे ही मनुष्यों का क़त्ल कर दिया। और जिसने किसी की जान बचाई, उसने मानो सारे मनुष्यों को जीवन प्रदान किया।" (क़ुरआन, 5:32)

क़ुरआन में दूसरी जगह है–

> "किसी जीव को न मारो जिसे अल्लाह ने आदरणीय ठहराया है सिवाए इसके कि हक़ (सत्य और न्याय) को यही अपेक्षित हो।" (क़ुरआन, 6:151, 17:33)

इस्लामी विधान के अनुसार सत्यानुकूल क़त्ल करने की केवल कुछ ही शकलें हैं, जिनमें इनसानी जान की प्रतिष्ठा समाप्त हो जाती है। उदाहरणतः अगर किसी ने जानते-बूझते किसी की हत्या की हो या इस्लामी राज्य-व्यवस्था के ख़िलाफ़ विद्रोह और ज़मीन में बिगाड़ फैलाने का अपराध किया हो या फिर विवाहित होने के बावजूद व्यभिचार किया हो तो क़त्ल किया जाएगा। इन परिस्थितियों में क़त्ल के फ़ैसले का अधिकार भी इस्लामी अदालत ही को है। नाहक़ क़त्ल इस्लाम में महापाप है।

प्रायः जब हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* की जीवनी लिखी जाती है तो उसमें लड़ाइयों को बहुत नुमायाँ करके पेश किया जाता है; जबकि सच्चाई यह है कि आप *(सल्ल.)* के समय की लड़ाइयों में दोनों ही ओर से (शहीदों और क़त्ल होनेवालों) की कुल संख्या बारह सौ (1200) है। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* को अल्लाह ने सारे संसार के लिए रहमत बना कर इनसानों के मार्गदर्शन के लिए भेजा था। यदि उनके हृदय में

दयाशीलता का यह गुण न होता तो वे मक्का-विजय के अवसर पर इक्कीस वर्ष के जानी दुश्मनों से चुन-चुनकर बदला लेते और उनमें से एक भी जीवित न बचता। लेकिन आप *(सल्ल.)* ने उन सबको आम माफ़ी (Amnesty) दे दी। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के ईशदूत होने का यह बहुत बड़ा प्रमाण है।

दूसरी ओर यह भी वास्तविकता है कि लड़ाइयाँ आप *(सल्ल.)* पर थोपी गई थीं। मक्का के क़ुरैश अरब के अन्य क़बीलों को भड़का कर मदीना पर बार-बार चढ़ आते थे। आत्मरक्षा करना प्रत्येक व्यक्ति और राज्य का स्वाभाविक अधिकार है, जिससे उसे वंचित नहीं किया जा सकता।

आप *(सल्ल.)* ने दुनिया को युद्ध के नियमों से अवगत कराया। कभी-कभी संस्कृति की रक्षा और उन्नति के लिए युद्ध आवश्यक हो जाता है। लेकिन शर्त है कि युद्ध सभ्यता एवं नियम के अधीन होकर किया जाए। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने आदेश दिया कि युद्ध में औरतों, बच्चों, बूढ़ों, उपासना-स्थलों के पुजारियों को क़त्ल न किया जाए। फ़स्लों और पेड़-पौधों को बरबाद न किया जाए। लाशों की बेहुरमती न की जाए। क़ैदियों के साथ अच्छा व्यवहार किया जाए और युद्ध में जो धन-सामग्री हाथ आए उसे अपने सरदार के पास लाकर जमा कर दिया जाए। संसार की आम सेनाओं में मनुष्य की शक्ल में वहूशी दरिन्दे (हिंसक पशु) होते हैं। जबकि हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने ऐसे मुजाहिदों से संसार को परिचित कराया जो सुचरित्र और ईशपराण थे। वे जिस देश में भी विजेता के रूप में गए वहाँ के लोगों ने उनसे अपनी जान, माल, इज़्ज़त और आबरू को सुरक्षित पाया।

इस्लाम में जिहाद (धार्मिक युद्ध) देशों पर विजय प्राप्त करने, प्राकृतिक संसाधनों के भण्डारों पर क़ब्ज़ा करने या बहादुरी के जौहर दिखाने के लिए नहीं है। बल्कि यहाँ इस्लामी राज्य और इस्लाम की रक्षा, पीड़ितों की मदद और अल्लाह के 'कलिमे' को बुलन्द करने के लिए होता है। इनसानों को इनसानों की ग़ुलामी से निकालकर उन्हें आज़ादी दिलाने और अल्लाह के बन्दों को वास्तव में अल्लाह का बन्दा बनाने के

लिए होता है क्योंकि इसी में मानव जाति की भलाई और सफलता है। इस्लाम में युद्ध की कल्पना उपद्रवपूर्ण नहीं बल्कि सुधारवादी है। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के कालखण्ड से आज तक मुसलमानों का इतिहास गवाह है कि कभी तलवार के बल पर या किसी प्रकार की ज़बरदस्ती से किसी को इस्लाम स्वीकार करने पर विवश नहीं किया गया। क़ुरआन मजीद में है—

"दीन के मामले में कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं है।"

(क़ुरआन, 2:256)

लोगों को इस्लाम की तरफ़ बुलाया जाता है। यह उनका अधिकार है कि वे इस्लाम क़बूल करें या न करें। जिन लोगों ने इस्लामी जिहाद के ख़िलाफ़ ग़लत प्रचार-प्रसार किया है, वह उनकी अपनी अज्ञानता या इस्लाम से दुश्मनी के कारण है अथवा अपनी काली करतूतों को छिपाने के लिए इस्लाम को दाग़दार करने की कोशिश है।

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* का चरित्र और आचरण

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के चरित्र और आचरण के बारे में क़ुरआन गवाही देता है कि—

"निस्सन्देह तुम नैतिकता के सर्वोच्च शिखर पर हो।" (क़ुरआन, 68 : 4)

आप *(सल्ल.)* ने फ़रमाया—

"मैं सुआचरण एवं नैतिकता की परिपूर्णता के लिए भेजा गया हूँ।" (हदीस : मुवत्ता)

सच्चे इनसान

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* निहायत ही सच्चे इनसान थे। आपने अपने जीवनकाल में कभी झूठ नहीं बोला। सन्देष्टा बनाए जाने के पहले ही लोग उन्हें सत्यवादी और अमानतदार की उपाधि दे चुके थे। नुबुव्वत के एलान के बाद आप *(सल्ल.)* के बदतरीन दुश्मनों को भी आपको झूठा कहने की हिम्मत नहीं हुई। अबू-जहल एक बहुत बड़ा दुश्मन था। उसने

कहा, ऐ मुहम्मद *(सल्ल.)*! हम तुमको झूठा नहीं कहते, बल्कि उस सन्देश को झुठलाते हैं जो तुम पेश कर रहे हो।[1] यही वजह है कि क़ुरआन मजीद आप *(सल्ल.)* की नुबुव्वत से पहलेवाली पवित्र जीवन की गवाही देता है। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के दिल, ज़बान और व्यावहारिकता में पूर्ण एकरूपता थी। आप (सल्ल.) जो कहते वही करते और जो करते वही कहते थे। जिन बुरी बातों से लोगों को रोकते थे, व्यक्तिगत जीवन में ख़ुद उनसे सबसे अधिक दूर रहते। आप *(सल्ल.)* ने आदेश दिया कि सच्चाई को परम कर्तव्य समझो और झूठ से बचो। आप *(सल्ल.)* के निकट झूठ मज़ाक़ और मस्लहत में भी जाइज़ न था।[2] आप *(सल्ल.)* के व्यक्तिगत जीवन और सामाजिक जीवन में कोई अन्तर न था। आप (सल्ल.) का पूरा जीवन लोगों के समक्ष बिलकुल शीशे की तरह निर्मल था। जब आप *(सल्ल.)* ने अपने निजी जीवन में कभी झूठ नहीं बोला तो आप (सल्ल.) से यह आशा कैसे की जा सकती थी कि आप *(सल्ल.)* ने अल्लाह का नाम लेकर झूठ बोला होगा कि "अल्लाह ने आपको नबी बनाया और आप पर क़ुरआन अवतरित किया है।" क़ुरआन में आप *(सल्ल.)* के बारे में यह फ़रमाया गया –

> "वह अपने मन की इच्छा से नहीं बोलता, यह तो एक प्रकाशना है जो उसपर उतारी जाती है।" (क़ुरआन, 53 : 3-4)

इनसान के चेहरे पर उसके चरित्र का प्रतिबिम्ब होता है। यही कारण है कि एक अपरिचित भी जब हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* को पहली बार देख लेता तो मन की गहराई से पुकार उठता कि ईश्वर की सौगन्ध यह किसी झूठे का चेहरा नहीं हो सकता। (सीरतुन्नबी *(सल्ल.)*)

मृदुल स्वभाव

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* अत्यन्त सहनशीलता और कोमल हृदय के व्यक्ति थे। यदि वे कठोर स्वभाव के होते तो कभी अपने लक्ष्य में सफल नहीं हो सकते थे। क़ुरआन मजीद में है–

---

[1] क़ुरआन, 10 : 16

[2] हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम, अल-अदबुल-मुफ़रद।

"(ऐ पैग़म्बर!) यह अल्लाह की बड़ी दयालुता है कि तुम इन लोगों के लिए अत्यन्त मृदुल स्वभाव के हो। अन्यथा यदि कहीं तुम क्रुद्ध स्वभाव और कठोर हृदय के होते तो ये सब तुम्हारे आस-पास से छँट जाते।"

(क़ुरआन, 3 : 159)

क़ुरआन मजीद ने नबी *(सल्ल.)* को 'रऊफ़ुर्रहीम' (आत्यान्तिक कृपालु) और 'रहमतुल्लिलआलमीन' (सर्वजगत् के लिए दयालुता) की उपाधि दी है। (क़ुरआन, 9:128 / 21:107) आप *(सल्ल.)* ने फ़रमाया, "जो नर्मी (मृदुलता) से वंचित रहा, वह तमाम भलाइयों से वंचित रह गया। (हदीस : मुस्लिम) यही कारण है कि जो आदमी एक बार भी आप *(सल्ल.)* से मिलता तो आपका दीवाना हो जाता था। हज़रत ज़ैद *(रज़ि.)* आपके सेवक थे। जब उनके पिताजी को पता चला तो उनको लेने के लिए मक्का आए। लेकिन ज़ैद *(रज़ि.)* ने हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* को किसी क़ीमत पर छोड़ना गवारा नहीं किया। इसी प्रकार मदीना में हज़रत अनस *(रज़ि.)* ने आप *(सल्ल.)* की दस वर्ष तक सेवा की। वे कहा करते थे कि उनको आप *(सल्ल.)* ने कभी मारा नहीं, डाँट-डपट नहीं की, क्रोधित नहीं हुए, कभी यह नहीं कहा कि ऐसा क्यों किया और ऐसा क्यों नहीं किया। बल्कि हमेशा प्यार-मुहब्बत से पेश आते थे। (सीरतुन्नबी (सल्ल.)) ये गवाहियाँ आप *(सल्ल.)* के व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित हैं। जो व्यक्ति खोटा होता है, उसके व्यक्तिगत जीवन और सामाजिक जीवन में बड़ा अन्तर होता है। लेकिन ऐसा कोई मामला हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* का नहीं था। घर के बाहर आप *(सल्ल.)* के नैतिक आचरण की यह स्थिति थी कि जो लोग आप से बदतमीज़ी से पेश आते थे आप *(सल्ल.)* उनको क्षमा कर देते या उस बात को अनदेखा कर देते बल्कि उनके साथ एहसान का मामला करते थे। आप *(सल्ल.)* ने कहा, "अल्लाह उस पर दया नहीं करता, जो दूसरों पर दया नहीं करता।" (हदीस : मिश्कात)

आप *(सल्ल.)* की शिक्षाओं में मनुष्य तो मनुष्य, पशुओं के साथ भी दयाभाव से काम लेने की ताकीद की गई है। आप *(सल्ल.)* ने कभी

किसी से अपने आप के लिए बदला नहीं लिया। (सीरतुन्नबी (सल्ल॰)) इसी गुण ने आप *(सल्ल॰)* को दयालुता की प्रतिमूर्ति बना दिया था। मक्कावालों ने आपका उपहास किया। कवि, जादूगर और मजनूँ कहा। आपको तरह-तरह से तंग किया, रास्ते में काँटे बिछाए, गन्दगियाँ डालीं। ताइफ़ के लोगों ने आप *(सल्ल॰)* को पत्थर मार-मारकर लहूलुहान कर दिया। उन्होंने अपने सख़्त अपशब्दों से आप (सल्ल॰) का दिल छलनी कर दिया। मक्का के लोगों ने हिजरत (मक्का छोड़ने) की रात आप *(सल्ल॰)* के घर का घेराव करके जान से मार डालने की साज़िश की। हिजरत के बाद भी लड़ाइयाँ लड़ीं और हमले किए। युद्ध में आपके रिश्तेदारों का कलेजा तक चबाया। लेकिन फिर एक दिन वह आया जब आप (सल्ल॰) ने मक्का में विजय प्राप्त की और सारे दुश्मन आप *(सल्ल॰)* के सामने सिर झुकाए खड़े थे। उस समय यदि आप *(सल्ल॰)* चाहते तो बदले की आग में ख़ून की नदियाँ बहा देते। लेकिन दया की प्रतिमूर्ति मुहम्मद (सल्ल॰) ने ऐसा न किया। उस समय सारे संसार के लिए रहमत (दयालुता) बनकर आए पैग़म्बर *(सल्ल॰)* ने उनसे पूछा, "तुम मुझ से किस प्रकार के व्यवहार की आशा रखते हो।" सबने जवाब दिया कि एक दयालु भाई के जैसा। आप *(सल्ल॰)* ने कहा :

> "आज तुम पर कोई पकड़ नहीं, जाओ तुम सभी आज़ाद कर दिए गए।" (सीरतुन्नबी)

दिल कहता है कि यह किसी मामूली इनसान का चरित्र नहीं हो सकता। उसकी महानता और उच्चता मानवजाति में अनुपम और बे-मिसाल है।

आर्थिक मोह का त्याग

नबी बनाए जाने से पहले हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार किया करते थे और आपकी पत्नी हज़रत ख़दीजा *(रज़ि॰)* भी एक पूँजीपति स्त्री थीं। लेकिन पैग़म्बरी (नुबूवत) मिलने के बाद आप *(सल्ल॰)* ने अपनी सारी धन-सम्पत्ति इस्लाम के प्रचार-प्रसार में लगा दी। ताइफ़ का सफ़र पैदल किया। कोई सवारी न थी। हिजरत (मक्का से मदीन

जाने) के सारे ख़र्चे का भार हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि.)* ने उठाया। जब भी आप *(सल्ल.)* को कहीं से कोई धन प्राप्त होता तो सिर्फ़ ज़रूरत भर रोकते और बाक़ी सब कुछ माँगनेवालों, निर्धनों और मुहताजों में बाँट देते। आप *(सल्ल.)* ने कभी किसी माँगनेवाले को ख़ाली हाथ नहीं लौटाया। (सीरतुन्नबी (सल्ल॰)) आप *(सल्ल.)* कहा करते, 'ऊपर (देने) वाला हाथ नीचे (लेने) हाथ से बेहतर है।'' (हदीस : तिरमिज़ी) मक्का-विजय के बाद हुनैन की लड़ाई में हज़ारों ऊँट, बकरियाँ और बेहिसाब सम्पत्ति हाथ आई तो आप *(सल्ल.)* ने वहीं नव-मुस्लिमों में उनकी दिलजोई के लिए वितरित कर दी। (सीरतुन्नबी (सल्ल॰)) जब आप *(सल्ल.)* का स्वर्गवास हुआ तो आपके पास कोई सम्पत्ति और जायदाद न थी। केवल कुछ दिरहम थे, वे भी आप *(सल्ल.)* ने ख़ैरात (दान) करवा दिए। हज़रत आइशा *(रज़ि.)* ने पड़ोसन से तेल उधार लेकर चिराग़ जलाया था। आप *(सल्ल.)* की ज़िरह भी एक यहूदी के पास कुछ किलो जौ के बदले गिरवी रखी हुई थी। (सीरतुन्नबी (सल्ल॰)) संसार में रहते हुए संसार में रुचि न रखने का यह अनुपम प्रमाण है जो पैग़म्बर का एक विशेष गुण होता है।

ईश-भक्ति

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* नबी बनाए जाने से पहले भी अपने पैदा करनेवाले की खोज में लगे रहते थे। हिरा नामक गुफा में दिन-रात उसी की याद में बैठे रहते थे। जब सच्चाई आप *(सल्ल.)* पर स्पष्ट हो गई तो उस परमपूज्य ईश्वर की याद और मुहब्बत पहले से अधिक बढ़ गई। बे हद अल्लाह का ज़िक्र करते। आप *(सल्ल.)* की ज़बान पर अक्सर 'सुबहान-अल्लाह' (अल्लाह की हस्ती पाक है), 'अलहम्दु-लिल्लाह' (सारी तारीफ़ें अल्लाह ही के लिए हैं) और 'अल्लाहु अकबर' (अल्लाह सबसे बड़ा है) के वाक्य जारी रहते। अल्लाह से बहुत अधिक तौबा और क्षमा-याचना की प्रार्थना करते। ईश-प्रसन्नता की चाह में फ़र्ज़ (अनिवार्य) नमाज़ों के अलावा नफ़्ल (तदधिक) नमाज़ों में लीन रहते। रात के एक बड़े भाग को नमाज़ (तहज्जुद) और क़ुरआन-पाठ में लगाते

जिस की वजह से कभी-कभी पैरों में सूजन आ जाती थी। (सीरतुन्नबी (सल्ल॰)) क़ुरआन में है–

> "(ऐ नबी) तुम्हारा प्रभु जानता है कि तुम कभी दो तिहाई रात के लगभग और कभी आधी रात और कभी एक तिहाई रात इबादत में खड़े रहते हो, और तुम्हारे साथियों में से भी एक गिरोह यह कार्य करता है।" (क़ुरआन, 73:20)

लोगों ने कहा कि आप *(सल्ल॰)* तो ईश्वर के प्रिय हैं, बख़्शे-बख़्शाए हैं, इतनी इबादत क्यों करते हैं? आप *(सल्ल॰)* उत्तर देते, "क्या मैं अल्लाह का कृतज्ञ बन्दा न बनूँ।" (सीरतुन्नबी (सल्ल॰)) फ़र्ज़ (अनिवार्य) रोज़ों के अलावा नफ़्ल (अनानिवार्य) रोज़े भी अधिकता से रखते। अल्लाह की पाक हस्ती बन्दों की उपासना की मुहताज नहीं है। लेकिन बन्दा उपासना के द्वारा ईश-निकटता प्राप्त करता है। उससे अपने सम्बन्ध को मज़बूत करता है और अपने मन को पवित्र करता है। आप *(सल्ल॰)* ने दिखा दिया कि दुनिया में रहते हुए तथा लोगों के हक़ों को अदा करते हुए किस प्रकार ईश-निकटता प्राप्त की जाती है। अल्लाह की उपासना के लिए सन्यास की आवश्यकता नहीं है। आप *(सल्ल॰)* दुआ किया करते थे–

> "ऐ अल्लाह, मुझे अपना ज़िक्र (महिमागान) करनेवाला, शुक्र करनेवाला बना और उत्तम उपासना की तौफ़ीक़ (शक्ति) प्रदान कर।" (हदीस : अबू-दाऊद)

सादगी और परलोक की चिन्ता

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* पवित्रता को पसन्द करते थे और बहुत ही सादा स्वभाव के थे। खाने में जो कुछ हलाल रोज़ी मिलती खा लेते। खाने में कभी कोई ऐब न निकालते। सबके साथ मिलकर खाना पसन्द करते। अधिकतर फ़ाक़ों की नौबत आती, पेट पर पत्थर तक बाँध लेते। कपड़े पाक-साफ़ पहनते। पैवन्द लगे हुए कपड़े पहनने में भी कोई शर्म महसूस नहीं करते थे। जन-सभाओं में सबके साथ बैठते। आप *(सल्ल॰)* करकश आवाज़ से बात नहीं करते थे। किसी का भी दिल न दुखाते।

साफ़ और सीधी बात करते, जिसमें शेख़ी और बड़ाई नहीं होती थी। मक्का छोड़ने (हिजरत) के बाद मदीना के शासक हुए। लेकिन आप *(सल्ल०)* यह पसन्द नहीं करते थे कि लोग आपके सम्मान में अतिशयोक्ति से काम लें, आप *(सल्ल०)* के लिए कुछ विशेष उपाधियाँ प्रयोग की जाएँ या आपके लिए खड़े हो जाया करें या फिर सलाम करने के लिए झुकें। न तो आपके लिए अंग-रक्षक थे, न ही बाज़ारों में जब आप (सल्ल०) निकलते तो हटो-बचो का मामला किया जाता था। आप *(सल्ल०)* का घर कोई भव्य भवन न था और न द्वार पर कोई चौकीदार बैठता था। बल्कि मिट्टी की कच्ची दीवारों और खजूर के पत्तों की छतवाली कुछ छोटी-छोटी कोठरियाँ थीं, जो मस्जिदे-नबवी से मिली हुई थीं। (सीरतुन्नबी (सल्ल०)) एक बार हज़रत उमर *(रज़ि०)* आप *(सल्ल०)* से मिलने के लिए आए तो देखा कि घर में कुछ भी सामान नहीं है। एक ओर पानी की एक छोटी मश्क लटक रही है और एक तरफ़ थोड़े-से जौ पड़े हुए हैं और आप *(सल्ल०)* खजूर की चटाई पर लेटे आराम कर रहे हैं। नबी *(सल्ल०)* को इस दशा में देखकर उमर *(रज़ि०)* की आँखों में आँसू भर आए। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल०)* ने कहा, "मुझे दुनिया से क्या लेना, मेरी और दुनिया की मिसाल ऐसी है जैसे कोई मुसाफ़िर थोड़ी देर के लिए किसी पेड़ की छाया में ठहरता है और फिर उसे छोड़कर चल देता है।" (सीरतुन्नबी (सल्ल०)) आप *(सल्ल०)* ने कहा, "जो व्यक्ति दुनिया से मुहब्बत करेगा वह अपना परलोक तबाह करेगा और जिसको अपना परलोक प्यारा होगा तो वह अपनी दुनिया की परवाह नहीं करेगा। अतः ऐ लोगो! तुम बाक़ी रहनेवाले जीवन (पारलौकिक जीवन) को समाप्त होनेवाले (सांसारिक) जीवन पर प्राथमिकता दो।" (हदीस : मिश्कात) हज़रत मुहम्मद *(सल्ल०)* के जीवन में राजाओं और शासकों की तरह कोई शानो-शौकत, कोई दिखावा और आडम्बर न था। बाह्य और अन्दरून दोनों में स्वाभाविक सादगी थी, और यह सादगी परलोक को इहलोक पर प्राथमिकता देने की वजह से थी। यह ख़ूबी अल्लाह के विशेष बन्दों ही की होती है।

व्यवहार

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* सबके साथ समाज में रहते थे। लोगों के साथ उनका मेल-जोल था। सामाजिक जीवन में लेन-देन और विभिन्न प्रकार के व्यवहार होते हैं। व्यवहार में आप *(सल्ल.)* खरे, सत्यवादी और बड़े ही अमानतदार थे। आश्चर्य यह है कि लोग आप *(सल्ल.)* से शत्रुता रखते लेकिन अपनी अमानतें (धरोहरें) आप *(सल्ल.)* ही के पास रखवाते थे। हिजरत की रात जो लोग आपको क़त्ल करने आए थे, उनकी अमानतें भी आप *(सल्ल.)* के पास ही थीं। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने हज़रत अली *(रज़ि.)* को अपना प्रतिनिधि बनाकर यह आदेश दिया था कि अमुक-अमुक लोगों की अमानतें हैं, उनको लौटा दी जाएँ। (सीरतुन्नबी (सल्ल.)) यह उस समय की बात है जबकि आप *(सल्ल.)* के पास एक दिरहम भी न था। हिजरत के सारे ख़र्च का बोझ हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि.)* ने उठाया था। यह उच्चतम चरित्र एक नबी का ही हो सकता है। आप *(सल्ल.)* ने जब किसी को वचन दिया तो उसको पूरा किया।

सन् 6 हिजरी में जब आप *(सल्ल.)* ने मक्कावालों से सन्धि की तो उसमें युद्ध-विराम के साथ एक शर्त यह भी थी कि अगर कोई मक्का से मदीना चला जाए तो वह वापस कर दिया जाएगा। अभी इस सन्धि पर हस्ताक्षर भी नहीं हुए थे कि पैरों में पड़ी हुई बेड़ियों के साथ (आपके एक साथी) अबू-जन्दल *(रज़ि.)* आए और आप *(सल्ल.)* की पनाह माँगी। मक्कावालों ने कहा कि सन्धि के अनुसार आप इनको नहीं ले जा सकते। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ख़ामोश हो गए और कहा कि अल्लाह इनके लिए कोई रास्ता ज़रूर निकालेगा। यह वचनबद्धता की बहुत बड़ी मिसाल है, जबकि उस समय आप *(सल्ल.)* के साथ चौदह सौ सहाबा *(रज़ि.)* मौजूद थे, जो एक इशारे में अपनी जान पर खेल-जाने के लिए तैयार थे। (सीरतुन्नबी (सल्ल.))

आप किसी से क़र्ज़ लेते तो बेहतर तरीक़े से वापस करते थे। कोई चीज़ ख़रीदते थे तो उसकी क़ीमत अदा करने में कभी अपने पद का अनुचित प्रयोग न करते कि बेचनेवाले को हिचकिचाहट हो। आप *(सल्ल.)*

लोगों को उनके हक़ से अधिक प्रदान करते और आप अपना हक़ छोड़ देते थे। (सीरतुन्नबी (सल्ल॰)) सारांश यह कि सद्व्यवहार और अच्छे बर्ताव में आप *(सल्ल॰)* अद्वितीय थे।

इस्लाम के आमन्त्रण की सच्ची तड़प

आप *(सल्ल॰)* के पूरे जीवन पर इस्लाम के प्रचार-प्रसार का रंग छाया हुआ था। अल्लाह के बन्दों को सत्य-मार्ग पर लाने की सच्ची तड़प थी। आप *(सल्ल॰)* की इस दशा का उल्लेख क़ुरआन में इस प्रकार किया गया है—

> "ऐ नबी! यदि ये लोग क़ुरआन के इस आमन्त्रण पर ईमान नहीं लाते तो क्या आप अपनी जान को हलाकत में डाल देंगे।" (क़ुरआन, 26:3)

आप *(सल्ल॰)* ने फ़रमाया, "मेरी मिसाल ऐसी है जैसे किसी आदमी ने रौशनी के लिए आग जलाई और पतिंगे उसपर जल जाने के लिए टूटे पड़ते हैं। वह कोशिश करता है कि ये पतिंगे किसी तरह आग से बचें, मगर पतिंगे उसकी एक नहीं चलने देते। ऐसा ही हाल मेरा है कि मैं तुम्हें कमर से पकड़-पकड़कर खींच रहा हूँ और तुम हो कि आग में गिरे पड़ते हो।" (हदीस : मिश्कात)

इस मिसाल से आप *(सल्ल॰)* की इनसानों से मुहब्बत और उनको सत्यमार्ग पर लाने की सच्ची तड़प का पता चलता है। आप *(सल्ल॰)* भलाई की राह पर चलनेवालों को जन्नत की शुभ-सूचना देते और बुराई का रास्ता अपनानेवालों को अज़ाब से डराते थे। तत्वदर्शिता और अच्छे उपदेशों के साथ आमन्त्रण देते। लोगों की सामाजिक स्थिति का ख़याल रखते। बात संक्षिप्त करते। बहस और झगड़ा नहीं करते थे। क़ुरआन सुनाकर इस्लाम का सन्देश पहुँचाना आपकी कार्य-प्रणाली थी। जो आप (सल्ल॰) से बुराई से पेश आता आप *(सल्ल॰)* उसके साथ भलाई करते। दुखी लोगों को दिलासा देते। (सीरतुन्नबी (सल्ल॰)) आप *(सल्ल॰)* का आचरण आपके प्रचार-प्रसार में बहुत सहायक था। अमीर-ग़रीब, देसी-परदेसी, आज़ाद-ग़ुलाम सभी से बिना किसी भेदभाव के मिलते और

उनको अल्लाह के दीन की दावत देते। इस सिलसिले में आप *(सल्ल.)* ने कभी भी अपने आराम का ख़याल नहीं किया। दीन की दावत के मामले में आपने कभी एक क्षण की भी देरी नहीं की। आप *(सल्ल.)* अपने गवर्नरों को यह निर्देश भी देते थे कि देखो, लोगों के लिए शुभ-सूचना देनेवाले बनो, धर्म से नफ़रत दिलानेवाले न बनो। उनके लिए आसानियाँ पैदा करो, कठिनाइयाँ पैदा मत करो। (सीरतुन्नबी (सल्ल.)) एक मरतबा आप *(सल्ल.)* के सामने क़ुरआन पढ़ा गया, जिसमें पैग़म्बरी (रिसालत) के काम के बारे में सवाल किए जाने का उल्लेख था (क़ुरआन, 4:41) तो फूट-फूटकर रोने लगे। क़ुरआन मजीद में है कि उस व्यक्ति की बात से अच्छी बात और किसकी होगी, जिसने लोगों को अल्लाह की तरफ़ बुलाया और अच्छा कर्म किया और कहा कि मैं अल्लाह का आज्ञापालक मुस्लिम हूँ। (क़ुरआन, 41:33)

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* 23 वर्ष तक इस्लाम के प्रसार और प्रचार के लिए दौड़-धूप करते रहे और आप *(सल्ल.)* ने इन्तिक़ाल से पहले जब अन्तिम हज अदा किया तो उस मौक़े पर अपने भाषण में बार-बार लोगों से पूछा कि लोगो! क्या मैंने अल्लाह के धर्म को तुम तक पहुँचा दिया? तो सब ने उत्तर दिया कि आप *(सल्ल.)* ने प्रचार-प्रसार और पैग़म्बरी का हक़ अदा कर दिया, अमानत को पूरा पहुँचा दिया और लोगों की हितकारिता और भलाई में कोई कसर न उठा रखी। इस बात पर आप *(सल्ल.)* ने आकाश की तरफ़ उँगली उठाई और कहा, "ऐ अल्लाह, ये लोग जो कह रहें हैं उसपर तू गवाह रहना।" फिर कहा, "जो यहाँ मौजूद है वह दूसरों तक यह (इस्लाम का) संदेश पहुँचा दे।" (सीरतुन्नबी (सल्ल.))

आप *(सल्ल.)* के नैतिक चरित्र का संक्षिप्त वर्णन

हज़रत आइशा *(रज़ि.)* आप *(सल्ल.)* के नैतिक चरित्र एवं सदाचार के बारे में गवाही देती हैं कि प्यारे नबी *(सल्ल.)* की आदत किसी को बुरा-भला कहने की न थी। बुराई के बदले बुराई नहीं करते थे बल्कि क्षमा कर दिया करते थे। जो बात सरल होती उसको अपनाते। आप

(सल्ल.) ने कभी किसी से अपने वैयक्तिक मामले में बदला नहीं लिया। किसी ईमानवाले पर लानत-मलामत न करते। अपने किसी भी सेवक और सेविका को कभी भी नहीं मारा। किसी के भी उचित निवेदन को कभी रद्द नहीं किया। आप *(सल्ल.)* अपने घरवालों के साथ हँसी-ख़ुशी रहते। अपने मित्रों का सम्मान करते। बातें ठहर-ठहरकर करते ताकि लोग याद रख सकें। एक बार किसी ने हज़रत आइशा *(रज़ि.)* से पूछा कि अल्लाह के रसूल (सन्देष्टा) का नैतिक चरित्र एवं आचार-व्यवहार कैसा था? तो उन्होंने उत्तर दिया कि आप *(सल्ल.)* का आचारण साक्षात् क़ुरआन था। यानी आप *(सल्ल.)* क़ुरआनी सदाचार और नैतिक चरित्र के व्यावहारिक यमूना थे।

हज़रत अली *(रज़ि.)* कहते हैं कि हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* अत्यन्त सत्यवादी, अत्यन्त नर्म-स्वभाव और अत्यन्त दानशील थे। कोई बुरी बात अपने मुख से नहीं निकालते थे। आप *(सल्ल.)* किसी से वाद-विवाद न करते, ज़रूरत से ज़्यादा बात न करते और जो बात मतलब की न हो उसमें न पड़ते। इसी तरह आप *(सल्ल.)* किसी को बुरा न कहते। किसी में दोष न निकालते और न ही किसी की टोह में रहते। वही बातें करते जिनसे कोई लाभदायक परिणाम निकल सकता हो। आप *(सल्ल.)* बीच में किसी की बात न काटते। दूसरों से अपनी प्रशंसा सुनना पसन्द न करते। (सीरतुन्नबी (सल्ल.))

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के चरित्र एवं आचरण से सम्बन्धित ये कुछ बातें थीं जिनसे आप *(सल्ल.)* की महानता और उच्चता का अनुमान लगाया जा सकता है। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* संसार के सबसे बड़े नैतिक शिक्षक, पवित्रता प्रदानकर्ता और प्रशिक्षक हैं। सदाचारिता की शिक्षा आप *(सल्ल.)* ने मौखिक और व्यावहारिक दोनों रूपों में दी। यही कारण है कि हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के सम्पूर्ण जीवन को अल्लाह ने ईमानवालों के लिए उत्तम आदर्श बना दिया है।

> "निस्सन्देह तुम लोगों के लिए अल्लाह के रसूल (सन्देष्टा) में एक उत्तम आदर्श है।" (क़ुरआन, 33:21)

आप *(सल्ल.)* ने कहा, "तुममें बेहतरीन वे लोग हैं जिनके अख़लाक़ एवं नैतिक चरित्र सबसे अच्छे हों।"

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* का सन्देश

मानव-समानता

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* का सन्देश सम्पूर्ण मानवजाति के लिए है, इसमें रंग, नस्ल, भाषा, देश और वर्गादि का कोई भेद नहीं पाया जाता। सभी प्रकार के पक्षपातों और भेदभावों से ऊपर उठकर मुहम्मद *(सल्ल.)* ने इनसान को केवल इनसान की हैसियत से सम्बोधित किया। सम्पूर्ण मानव-इतिहास इन्हीं भेदभावों के कारण मानवता का ख़ून बहाया जाता है। (वर्णाश्रम की धारणा लोगों को विभिन्न वर्गों में विभाजित करती है। इसराईलियों और जर्मनों के यहाँ नस्ली भेदवाव का उग्ररूप पाया जाता है। काले और गोरों के मध्य भेदभाव तथा देश और राष्ट्र के अन्तर की धारणा ने संसार में जो ज़ुल्म ढाए हैं वे किसी से छिपे हुए नहीं हैं)

क़ुरआन में मानव-एकता और समानता का सन्देश है। इसी सन्देश के साथ हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* को संसार के सारे इनसानों की ओर भेजा गया है। क़ुरआन में आया है—

> "और (ऐ नबी), हमने तुमको सारे ही इनसानों के लिए शुभ-सूचना देनेवाला और सचेत करनेवाला बनाकर भेजा है, मगर अधिकतर लोग जानते नहीं हैं।" (क़ुरआन, 34 : 28)

आप *(सल्ल.)* ने कहा कि आप *(सल्ल.)* को संसार के प्रत्येक काले और गोरे इनसान के लिए पैग़म्बर बनाकर भेजा गया है। (हदीस : मुसनद अहमद)

अल्लाह और उसके पैग़म्बर की नज़र में संसार के तमाम इनसान एक बिरादरी हैं। सब आदम और हव्वा *(अलैहि.)* की सन्तान हैं। अल्लाह का फ़रमान है—

> "लोगो! हमने तुमको एक पुरुष और एक स्त्री से पैदा किया और फिर तुम्हारी क़ौमें और बिरादरियाँ बना दीं ताकि तुम एक-दूसरे को पहचानो। वास्तव में अल्लाह की

दृष्टि में तुममें सबसे अधिक श्रेष्ठ वह है जो तुममें सबसे अधिक ईशपरायण है।" (क़ुरआन, 49 : 13)

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* ने अपने अन्तिम हज के अवसर पर लोगों को सम्बोधित करते हुए इस तथ्य की भी उद्घोषणा की– "लोगो, ख़बरदार रहो!, तुम सबका ईश्वर एक है। किसी अरबवाले को किसी ग़ैर-अरबवाले पर और किसी ग़ैर-अरबवाले को किसी अरबवाले पर और किसी गोरे को किसी काले पर और किसी काले को किसी गोरे पर कोई श्रेष्ठता नहीं है। अल्लाह की दृष्टि में तुममें सबसे प्रतिष्ठित वह है, जो सबसे अधिक ईशपरायण और परहेज़गार हो। बताओ क्या मैंने तुम्हें बात पहुँचा दी है? लोगों ने उत्तर दिया : हाँ, ऐ अल्लाह के रसूल *(सल्ल॰)*। फिर फ़रमाया, "अच्छा, तो जो मौजूद हैं वे उन लोगों तक यह बात पहुँचा दें, जो मौजूद नहीं हैं।" (बैहक़ी)

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* का यह सन्देश कि समस्त मनुष्य मानवीय स्तर पर समान हैं, केवल विचारधारा की हद तक न था, बल्कि आप *(सल्ल॰)* ने अपने जीवन की संक्षिप्त-सी अवधि में मुस्लिम समाज में इसको प्रचलित कर दिया। अतः प्रतिदिन पाँच बार नमाज़ के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है कि अमीर-ग़रीब, स्वामी-सेवक, किसी ज़ात-पात और छूत-छात के भेदभाव के बग़ैर एक ही पंक्ति में एक ईश्वर के समक्ष खड़े होते, झुकते और सज्दा करते (माथा टेकते) हैं। इसी प्रकार प्रतिवर्ष हज के अवसर पर देखा जा सकता है। अल्लाह के बन्दे पूर्व-पश्चिम और उत्तर-दक्षिण से एकेश्वरवाद के केन्द्र 'काबा' की ओर खिंचे चले आते हैं। उनका रंग-रूप, अलग होता है, उनकी भाषाएँ भी अलग होती हैं, उनका सम्बन्ध विभिन्न नस्लों और समुदायों से होता है, उनकी मातृभूमि और क्षेत्र भी एक नहीं होते। उनमें अरबवाले और ग़ैर-अरब वाले दोनों होते हैं। काले भी होते हैं और गोरे भी। रंग-रूप, भाषा, नस्ल और देश की इन तमाम भिन्नताओं के बावुजूद एक ही लिबास (इहराम) और एक ही कलिमा (वाक्य) "लब्बै-क अल्ला-हुम-म लब्बैक........" को दुहराते हुए हज का फ़र्ज़ अदा करते हैं।

मानवीय एकता का यह प्रदर्शन आज भी हर व्यक्ति देख सकता है। अल्लाह का सन्देश है–

> "यह तुम्हारी उम्मत (समुदाय) वास्तव में एह ही उम्मत (समुदाय) है और मैं तुम्हारा रब (पालनहार) हूँ, अतः तुम मेरी ही उपासना (बन्दगी) करो।" (क़ुरआन, 21 : 92)

सच्चाई यह है कि इस्लाम के अतिरिक्त वास्तविक मानव-समानता कहीं और मौजूद नहीं है।

एकेश्वरवाद की धारणा

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने जिस समय अपनी दावत (आमन्त्रण) का आरम्भ किया था उस समय संसार में बहुत-से धर्म प्रचलित थे, लेकिन उनकी शिक्षाओं में बिगाड़ पैदा हो चुका था। बहुत सारी राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक समस्याएँ मौजूद थीं तथा नैतिक बुराइयाँ भी थीं। लेकिन आप *(सल्ल.)* ने इनमें से किसी समस्या को नहीं छेड़ा, बल्कि सबसे पहले मानव की आस्था को सही करने की ओर पूरा ध्यान केन्द्रित किया। आप *(सल्ल.)* का एक ही सन्देश था, वह यह कि "लोगो! कहो, अल्लाह के अतिरिक्त कोई उपास्य नहीं है, सफल हो जाओगे–।" वह अल्लाह–, जिसकी तरफ़ आप *(सल्ल.)* लोगों को बुला रहे थे, उस महानतम् हस्ती का सम्पूर्ण परिचय भी आप *(सल्ल.)* ने कराया।

अल्लाह (न दो है, न तीन और न अनगिनत, बल्कि वह) केवल एक और यकता (अद्वितीय) है, अविभाजनीय है। अपने आप में स्थित है। सदैव जीवित रहनेवाला है। हमेशा से है और हमेशा रहेगा। वह किसी का न पिता हैं, न पुत्र और न कोई उसके समान है। न उसको किसी काम से थकान होती है; न उसको ऊँघ आती है, न नींद। वह हर चीज़ से निस्पृह है। सम्पूर्ण सृष्टि का स्रष्टा और पालनहार वही है। वही रोज़ी देनेवाला है। आकाशों और पृथ्वी में जो कुछ भी है सबका स्वामी वही है। वही ब्रह्माण्ड की व्यवस्था का प्रबन्धक है; हर चीज़ उसी के आदेशाधीन है। वह हर चीज़ पर सामर्थ्य रखता है। जो

चाहता है करता है। उसके फ़ैसलों पर पुनरावलोकन करनेवाला कोई नहीं। वही खुले और छिपे का जाननेवाला है। वह आँखों की चोरी और दिलों के भेदों तक का जाननेवाला है, उसका ज्ञान हर चीज़ पर आच्छादित है। वह हर चीज़ को हर जगह और हर समय देखता है। वही सबकी दुआओं और प्रार्थनाओं का सुननेवाला और आवश्यकताओं की आपूर्ति करनेवाला है। लाभ और हानि का अधिकार उसी के पास है। मान-सम्मान और अपमान, जीवन और मृत्यु का देनेवाला वही है।[1]

क़ुरआन मजीद से इस संसार और मानव-अस्तित्व की निशानियों से अल्लाह के वुजूद और उसकी तौहीद को साबित किया गया है। विभिन्न आयतों में बताया गया है कि आकाशों और पृथ्वी का सृजन किसने किया है? रात और दिन का चक्र कौन चलाता है? जीवित से मृत और मृत से जीवित को कौन निकालता है? कौन बारिश बरसाता है और कौन मृत ज़मीन को जिला उठाता है? किसने पृथ्वी पर पर्वत जमा दिए और किसने नदियाँ प्रवाहित कीं और कौन समुद्रों में नाव चलाता है? कौन माँ के पेट में रूप देता है? कौन सुनने, देखने और मस्तिष्क की क्षमताएँ प्रदान करता है? प्रार्थनाओं का सुननेवाला, हानि-लाभ का पहुँचानेवाला कौन है? स्पष्ट है कि इन सब बातों का उत्तर एक ही है, और वह है– 'अल्लाह' तो फिर उसको छोड़कर दूसरों को क्यों उपास्य बनाया जाए जो अधिकार और सामर्थ्य कुछ भी नहीं रखते। अस्ल में ये कुछ नाम हैं जो लोगों ने दे रखे हैं।

(क़ुरआन– 27:60-64; 56:57-72; 10:31-35; 6:46; 30:40; 28:72; 34:22-23)

सम्पूर्ण सृष्टि का वही अकेला स्रष्टा, पालनहार, पूज्य, स्वामी, प्रबन्धक और शासक है। उसके सिवा किसी में ईश्वरत्व, स्वामित्व और शासकीय क्षमता की निम्नस्तर की ख़ूबियाँ भी नहीं हैं। इस्लाम में अल्लाह के अस्तित्व, गुणों, अधिकारों और क्षमताओं में किसी को साझीदार बनाना सबसे बड़ा गुनाह है। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने तौहीद (एकेश्वरवाद) के

---

[1] क़ुरआन, 112:1 से 4, 2:256 / 6:73, 164 / 25:2 / 35:3 / 51:58 / 10:107 / 57:5 / 85:16 / 13:41 / 3:26 / 34:2,3 / 6:59 / 1:1 / 67:1, 13, 14 / 40:60

आमन्त्रण के साथ शिर्क (अनेकेश्वरवाद) और मूर्तिपूजा को असत्य बताते हुए वह्य (ईश-प्रकाशना) की भाषा में कहा कि—

"लोगो! एक उदाहरण दिया जाता है, ग़ौर से सुनो! जिन उपास्यों को तुम अल्लाह को छोड़कर पुकारते हो वे सब मिलकर एक मक्खी भी पैदा करना चाहें तो नहीं कर सकते, बल्कि मक्खी उनसे कोई चीज़ छीन ले जाए तो वे उसे छुड़ा भी नहीं सकते। सहायता चाहनेवाले भी निर्बल और जिनसे सहायता माँगी जाती है वे भी असहाय और निर्बल।" (क़ुरआन— 22:73)[1]

अल्लाह एक नूर (प्रकाश) है उसकी कोई उपमा नहीं। अल्लाह को छोड़कर ज़िन शक्तियों की लोग दुनिया में पूजा और उपासना करते हैं, उनका कणभर भी ईश्वरत्व में भाग नहीं है। जिन मूर्तियों को ईश्वरत्व में साझीदार बनाकर पूजा जाता है उनमें कुछ भी शक्ति नहीं है। वे न सुन सकती हैं, न देख सकती हैं और न ही बात कर सकती हैं। न किसी चीज़ को पकड़ सकती हैं और न ही चल सकती हैं। न कुछ खा सकती हैं, न पी सकती हैं। वे हानि-लाभ भी नहीं पहुँचा सकतीं। उन्हें लोग बनाते हैं, वे कोई चीज़ नहीं बना सकतीं, तो फिर ऐसी निर्मूल चीज़ों को किसी प्रमाण के बिना पूजना अज्ञानता और नासमझी है।

सूर्य, चन्द्रमा, तारे, नदियाँ, पर्वत, पेड़ और पशु आदि सब अल्लाह की रचना हैं। इन सबको अल्लाह ने मानवजाति की सेवा में लगाया है। अल्लाह ने इनसान को सूझ-बूझ दी है। बाप-दादा का अन्धानुकरण छोड़कर चिन्तन-मनन करके ऐसी चीज़ों से अपना सम्बन्ध तोड़कर तौहीद (ऐकेश्वरवादी होने) का एलान करना चाहिए, जिस प्रकार हज़रत इबराहीम *(अलैहि॰)* ने किया था।[2]

---

[1] इसी संदर्भ में क़ुरआन के अन्य स्थान देखें, 29:41; 31:13; 4:48 116; 5:72; 6:83, 88; 39:35

[2] क़ुरआन, 24:35, 42:11; 26:69-82; 21:51-79; 14:35; 30:20; 12:40; 16:17 7:195; 6:75-79; 7:179

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने एक ईश्वर की धारणा प्रस्तुत की और बताया कि ईश्वर को एक मानने और उसके आदेशों के अनुपालन में झुक जाने से मनुष्य हर प्रकार की दासता और बन्धनों से मुक्त हो जाता है। उसका अल्लाह से सीधे सम्पर्क स्थापित हो जाता है। इस्लाम में अल्लाह तक पहुँचने के लिए किसी, फ़ादर, पोप, पण्डित, पुरोहित, पीर और फ़क़ीर की आवश्यकता नहीं है। क़ुरआन में है—

"तुम जहाँ कहीं भी हो अल्लाह तुम्हारे साथ है।" (क़ुरआन, 57:4)

इस प्रकार हम देखते हैं कि सृष्टि और स्रष्टा के बीच जो पर्दे पड़े हुए थे हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने उन सबको तार-तार कर दिया और बन्दे को ख़ुदा से मिला दिया।

एकेश्वरवाद की अपेक्षा यह है कि मनुष्य हर प्रकार की ग़ुलामी से मुक्त हो जाए, चाहे वह मनेच्छा की ग़ुलामी हो या अपने जैसे मनुष्यों की, या अल्लाह को छोड़कर किसी और की उपासना के विभिन्न रूप हों। उसकी माँग है कि इनसान एक ईश्वर के प्रति आस्थावान होकर उसके समक्ष अपने आप को समर्पित कर दे। क़ुरआन में है—

"अतः तुम्हारा पूज्य-प्रभु एक ही पूज्य-प्रभु है, उसी के तुम आज्ञाकारी बनो।"[1] (22:34)

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने अल्लाह की तरफ़ से संसार के समस्त मनुष्यों को, बिना किसी भेदभाव और अन्तर के, एक ही सन्देश सुनाया, वह यह था—

ईश्वर की बन्दगी की ओर बुलाना

"लोगो, बन्दगी करो अपने उस रब (पालनहार) की, जो तुम्हारा और तुमसे पहले जो लोग हुए हैं उन सबका पैदा करनेवाला है, तुम्हारे बचने की आशा इसी प्रकार हो सकती है।" (क़ुरआन, 2:21)

[1] और अधि देखें क़ुरआन—
25:43-44; 28:50; 18:28; 2:170; 5:104; 31:21; 26:150-151; 6:116

इस्लाम में ईश्वर की बन्दगी से अभिप्राय पूरे जीवन में बिना किसी बचाव के ख़ुदा के आदेशों का अनुपालन और आज्ञाकारिता को अपनाना है। अल्लाह की बन्दगी केवल पूजा-पाठ की तरह कोई निजी काम नहीं है, बल्कि सम्पूर्ण जीवन को घेरे में लिए हुए है। जन्म से लेकर मृत्यु तक अपने सारे कामों को ईश-प्रसन्नता के लिए उसके आदेशानुसार चलाने का नाम अल्लाह की बन्दगी (उपासना) है। अपनी इच्छाओं और ख़ाहिशों को ईश्वर के आज्ञाधीन कर देना ही इस्लाम है। अल्लाह की बन्दगी के लिए उसके आदेशों और निर्देशों का जानना ज़रूरी है, जो क़ुरआन और हदीस के रूप में मौजूद हैं। उनमें वर्णित शिक्षाएँ, अवधारणाएँ, उपासनाएँ, मन-पवित्रता, नैतिकता, सामाजिकता, आर्थिकता, राजनीति, युद्ध व सन्धि और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों पर व्याप्त हैं। (क़ुरआन, 2:207-208; 51:56; 6:162; 4:59)

अल्लाह की बन्दगी बजा लाने से तात्पर्य, अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञा का अनुपालन करना है। जिसने रसूल की आज्ञा का पालन किया उसने मानो अल्लाह का आज्ञापालन किया। अल्लाह ने हर रसूल को इसी आदेश के साथ भेजा कि उसी की उपासना की जाए। आज्ञापालन यह है कि क़ुरआन और हदीस में जिन बातों का आदेश दिया गया है उनपर अमल किया जाए, और जिन बातों से रोका गया है उनसे बचा जाए। अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान (आस्था) की अपेक्षा आज्ञापालन है। नाफ़रमानी और ईमान एक साथ जमा नहीं हो सकते। आप *(सल्ल.)* ने फ़रमाया, "तुममें से कोई व्यक्ति उस वक़्त तक ईमानवाला (आस्थावान) नहीं हो सकता जब तक उसकी मनेच्छाएँ क़ुरआन मजीद के अधीन न हो जाएँ।" (क़ुरआन, 4:62, 65; 59:7; हदीस : मिश्कात)

क़ुरआन मजीद में अल्लाह का फ़रमान है—

"लोगो! तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारे पास स्पष्ट प्रमाण आ गया है। और हमने तुम्हारी ओर ऐसा प्रकाश भेज दिया है जो तुम्हें साफ़-साफ़ रास्ता दिखानेवाला है। अब जो लोग अल्लाह की बात मान लेंगे और उसकी पनाह ढूँढेंगे उनको

अल्लाह अपनी दयालुता और अपने उदार अनुग्रह एवं अनुदान के क्षेत्र में दाख़िल करेगा और अपनी ओर आने का सीधा मार्ग उनको दिखा देगा।"(क़ुरआन, 4:174, 175)

ईश्वर के समक्ष उत्तरदायी होने की परिकल्पना

इस संसार के सम्बन्ध में लोगों की विभिन्न धारणाएँ हैं। कुछ धर्म ईश-कल्पना से ख़ाली हैं या 'ला अदरीयत' (अर्थात संशयवाद) के मानने वाले हैं। (उदाहरणार्थ बुद्ध मत और जैन मत), उनके निकट यह संसार मायाजाल है या वे इसको यातना-गृह समझते हैं, और इससे निर्वाण या मोक्ष प्राप्त करना चाहते हैं। आवागमन पर आस्था रखनेवाले इसी संसार को स्वर्ग या नरक पाने का स्थान समझते हैं, उनकी कल्पना के अनुसार कर्मों का फल विभिन्न रूपों में यहीं मिलता रहता है। भौतिकवादी यह समझते हैं कि यह दुनिया एक बड़े विघटन से अस्तित्व में आई है। न कोई इसका बनानेवाला है और न ही कोई चलानेवाला है। उनके विचारानुसार यह दुनिया भोग-विलास की जगह है। स्वच्छन्द होकर खाओ-पियो, ऐश करो और जो चाहो सो करो। इसलिए कि मरने के बाद दूसरा जीवन और हिसाब-किताब कुछ भी नहीं है। ऐसी धारणाओं ने मनुष्य को या तो वैराग्य की ओर ढकेल दिया या फिर भौतिकवादी बनाकर प्रत्येक बन्धन से मुक्त करके केवल एक पशु बना दिया है।

इन ग़लत धारणाओं के विपरीत हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने बताया कि मनुष्य संसार में ग़ैर-ज़िम्मेदार (Irresponsible) पैदा नहीं किया गया है। संसार मानवजाति का परीक्षा-स्थल है। यहाँ उसको वैचारिक स्वतन्त्रता और कर्म पथ अपनाने का अधिकार (Free will & Freedom of Choice) दिया गया है। उसपर कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं है। यहाँ अल्लाह की ओर से उसके समक्ष अच्छाई और बुराई के दो रास्ते रख दिए गए हैं और इनके परिणाम से भी अवगत करा दिया गया है। अल्लाह का फ़रमान है—

"अल्लाह ने जीवन और मृत्यु को आविष्कृत किया ताकि तुम लोगों को आज़माकर देखे कि तुममें से कौन अच्छा कर्म करनेवाला है।" (क़ुरआन, 67:2)

यह संसार कर्म-गृह है और परलोक परिणाम-गृह।

एक दिन अल्लाह क़ियामत बरपा करेगा। इहलोक की सारी व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जाएगी। सारे इनसान मर जाएँगे। इस चरण के बाद अल्लाह अगले-पिछले सारे मनुष्यों को जीवित करके उठाएगा और उनको हश्र के मैदान में जमा किया जाएगा। फिर उन्हें अपने जीवन-कर्मों के सम्बन्ध में जवाब देना होगा। (क़ुरआन, 39:68)

हश्र के मैदान में प्रत्येक व्यक्ति ईश्वर के समक्ष उत्तरदायी होगा। वहाँ कोई अनुचित और बिना अनुमति सिफ़ारिश नहीं कर सकेगा। कोई पिता, पुत्र और जिगरी दोस्त किसी के काम न आएगा। न वहाँ कोई फ़िद्या (अर्थदण्ड) स्वीकार किया जाएगा, न रिश्वत चलेगी और न किसी का ज़ोर चलेगा। कोई किसी के बदले पापों का प्रायश्चित भी नहीं कर सकता। वहाँ कोई किसी और के कर्मों का ज़िम्मेदार न होगा। हर आदमी अपनी मुक्ति के लिए परेशान होगा और चाहेगा कि उसके बदले माता-पिता, बीवी-बच्चे ले लिए जाएँ। (क़ुरआन, 2:254-255; 70:11-14; 35:118; 2:141)

वहाँ इनसाफ़ की तमाम शर्तों को पूरा किया जाएगा। मनुष्य का कर्म-पत्र उसके सामने होगा। प्रत्येक व्यक्ति कण बराबर भलाई और कण बराबर बुराई को देख लेगा। उसके कारनामे उसके सामने होंगे। व्यक्ति के अपने अंगों की, वातावरण की और ईशदूतों की गवाहियाँ पेश होंगी। इसके बाद सत्य पर आधारित फ़ैसला कर दिया जाएगा। किसी पर कणभर भी अत्याचार न होगा। (क़ुरआन, 17:141; 45:29; 18:49; 99:2-6; 36:65; 41:20-21; 39:69; 7:6)

ईश्वरीय निर्णय बिल्कुल निष्पक्ष होगा। जो कोई संसार में कुधर्म और अनेकेश्वरवाद में ग्रसित होकर अपनी सारी दौड़-धूप पथ-भ्रष्टता और ईश-अवज्ञा के मार्ग में करता रहा तो नरक उसका ठिकाना होगा और जिसने सांसारिक जीवन में ईश-उपासना अपनाई होगी तथा अपने

आपको मन की बुरी इच्छाओं से बचाया होगा, तो वह नेमत भरी जन्नत (स्वर्ग) में प्रविष्ट किया जाएगा। यही वास्तव में सफल व्यक्ति होगा। (क़ुरआन, 18:104; 79:37-41; 3:185)

परलोक के प्रमाण

मृत्यु के पश्चात जीवन के निश्चित रूप से होने पर क़ुरआन मजीद ने अनेकों प्रमाण दिए हैं; जिनको थोड़ी-सी सूझ-बूझ रखनेवाला भी समझ सकता है—

- मरकर जी उठना ऐसा ही है, जिस प्रकार रोज़ हम नींद के बाद जाग उठते हैं। (क़ुरआन, 39:42; 6:60)
- दोबारा जीवन ऐसा है जैसे मुर्दा ज़मीन वर्षा के बाद जीवित हो जाती है। (क़ुरआन, 22:5-7; 30:24)
- जिस ईश्वर ने इतने बृहत् ब्रह्माण्ड की रचना की, उसके लिए दूसरी बार मनुष्य को पैदा करना कौन-सा कठिन काम है। (क़ुरआन, 17:98, 99; 79:27-36)
- जिसने इनसान को पहली बार पैदा किया है, उसके लिए इसमें कोई कठिनाई नहीं कि वह दूसरी बार भी उसको पैदा कर दे। (क़ुरआन, 23:14-16; 75:36-40)
- बुद्धि भी यही कहती है कि अच्छे काम करनेवालों को इनाम और बुरे लोगों को सज़ा दी जाए। (क़ुरआन, 68:36)

परलोक की अवधारणा इनसान के अन्दर ज़िम्मेदारी का एहसास पैदा करती है। वह अपने आपको बे-लगाम बैल की तरह (Scot free) बिलकुल आज़ाद नहीं समझ सकता। वह कभी ईश्वरीय ध्यान से निश्चिन्त नहीं हो सकता। वह ईश्वर को दृष्टा समझ कर काम करेगा और परलोक में जवाब देही के लिए तैयारी करेगा।

परलोक पर आस्था मानव जीवन के पूरे नैतिक चरित्र पर प्रभाव डालती है। सत्यता, अमानत और ईमानदारी उसके एक-एक कर्म से

प्रकट होती है। वह ईश-भय के साथ काम करता है और अपने कर्म में निष्ठावान् होता है। ईश-प्रसन्नता और परलोक-सफलता उसका अभीष्ट होता है।

यदि परलोक पर आस्था न हो तो फिर अल्लाह पर, उसके पैग़म्बरों पर, किताबों पर और फ़रिश्तों पर ईमान इनसान के लिए लाभप्रद नहीं हो सकता, इसलिए कि इस्लामी आस्था में ये सभी बातें एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं।

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* ने संसार को क्या दिया?

एक जीवन-व्यवस्था

क़ुरआन मजीद बताता है कि संसार में पैग़म्बरों के भेजे जाने का उद्देश्य न्याय-व्यवस्था को स्थापित करना है। अधिक व्यापक शब्दों में नबियों के भेजे जाने के उद्देश्य को 'दीन (धर्म) को स्थापित करना' भी कहा गया है। (क़ुरआन, 42:13/57:25)

> "वह अल्लाह ही है जिसने अपने रसूल को मार्गदर्शन और सत्यधर्म के साथ भेजा है ताकि उसे सभी असत्य-धर्मों पर प्रभुत्व प्रदान कर दे चाहे बहुदेववादियों को यह कितना ही अप्रिय हो।" (क़ुरआन, 61:9)

इस्लाम की एक मौलिक विशेषता यह है कि इसमें धार्मिक और भौतिक जीवन में अन्तर नहीं किया गया है। इसमें ज़िम्मेदारियों से भागने की और दुनिया को छोड़ देने की शिक्षा नहीं है। क़ुरआन में है–

> "और रहबानियत (संन्यास) को लोगों ने ख़ुद आविष्कृत कर लिया है, हमने उनको इसका आदेश नहीं दिया था।"
>
> (क़ुरआन, 57:27)

अल्लाह ने पाक और पवित्र चीज़ें खाने, शृंगार करने, पाक-साफ़ रहने और अल्लाह के बन्दों के अधिकारों को अदा करने की शिक्षा दी है। (क़ुरआन, 7:31-32; 5:88; 2:168; 74:4-5)

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* ने कहा कि इस्लाम में रहबानियत (संन्यास) नहीं है। (रूहुल-मआनी)

एक बार आप *(सल्ल॰)* के साथियों में से किसी ने कहा कि मैं रात भर नमाज़ें ही पढ़ता रहूँगा, किसी ने कहा कि मैं हमेशा रोज़े रखूँगा। और किसी ने कहा कि मैं विवाह नहीं करूँगा। आप *(सल्ल॰)* को कुछ पता चला तो कहा, 'मैं रात में नमाज़ भी पढ़ता हूँ और सोता भी हूँ

रोज़ा रखता भी हूँ और नहीं भी, और औरतों से निकाह भी करता हूँ। तो जो मेरी सुन्नत (तरीक़े) से मुँह मोड़े वह हममें से नहीं। (हदीस : बुख़ारी (रिवायत अनस रज़ि॰))

नबी *(सल्ल॰)* ने लोगों के सामने तौहीद (एकेश्वरवाद), रिसालत (ईशदूतत्व) और आख़िरत (परलोक) की धारणाएँ पेश ही नहीं कीं बल्कि इन धारणाओं के आधार पर मानव-जीवन की एक पूरी व्यवस्था चलाकर भी दिखा दी। एक नई संस्कृति और सभ्यता का आरम्भ किया। आप *(सल्ल॰)* ने मानवीय जीवन के सभी विभागों जैसे नैतिकता, उपासनाएँ, सामाजिकता, आर्थिकता, राजनीति और न्याय-पालिका में एक सुचरित्र व्यवस्था स्थापित की। क़ुरआन और हदीस की शिक्षाओं के हवाले से उस व्यवस्था की एक संक्षिप्त रूपरेखा यह है—

नैतिकता

नैतिकता से तात्पर्य मानव-जीवन का सम्पूर्ण नैतिक चरित्र है, जो उसके चिन्तन-मनन, स्वभावों और व्यावहारिक जीवन पर व्याप्त है।

नैतिक बुराइयाँ जिन से बचना ज़रूरी है

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* की शिक्षाओं में अनैतिक चरित्र की निन्दा की गई है। बुरी प्रवृत्तियाँ मानव चरित्र पर प्रभावशील होती हैं, मिसाल के तौर पर 'घमण्ड'। क़ुरआन में है कि अल्लाह घमण्ड करनेवालों को पसन्द नहीं करता, घमण्ड शैतान का गुण है। (क़ुरआन 16:16; 2:34; 7:133) आप *(सल्ल॰)* ने कहा, "जिसके दिल में कण बराबर भी घमण्ड होगा वह जन्नत (स्वर्ग) में नहीं जाएगा।" (हदीस : मुस्लिम) हसद (ईर्ष्या) तो वह बुराई है, जो मनुष्य के धर्म को मूँढ़ देती है और आग की तरह नेकियों को खा जाती है। (हदीस : मिश्कात, अबू-दाऊद) अल्लाह ने बदगुमानी से बचने की ताकीद की है। (क़ुरआन, 49:12) आप *(सल्ल॰)* ने कहा, "किसी ईमानदार आदमी के दिल में कंजूसी और लालच नहीं हो सकता।" (हदीस : नसई)

क़ुरआन मजीद में झूठ से बचने की ताकीद है। (क़ुरआन, 22, 30; 24:72) आप *(सल्ल.)* ने झूठ बोलने से मना किया है। क्योंकि यह बुराई मनुष्य के पूरे व्यक्तित्व (Personality) को तबाह व बरबाद करके रख देती है। आप *(सल्ल.)* ने फ़रमाया कि झूठ किसी हाल में जाइज़ नहीं है, न संजीदगी में और न ही मज़ाक़ में। (टल-अदबुल-मुफ़रद-रिवायत-इब्ने-मसऊद (रज़ि.)) किसी इनसान के झूठा होने के लिए यही काफ़ी है कि वह सच्चाई का पता बिना किए बात कह दे। (हदीस : मुस्लिम, रिवायत अबू-हुरैरा (रज़ि.)) झूठी गवाही को आप *(सल्ल.)* ने बड़े गुनाहों (महापाप) में शुमार किया है। (हदीस : अबू-दाऊद)

सामाजिक बुराइयों में ग़ीबत (पीठ पीछे निन्दा करने) को मुर्दा भाई का मांस खाने के बराबर कहा गया है। चुग़ली करने, ताना देने, पीठ-पीछे बुराइयाँ करने, दूसरों की टोह में लगे रहने और उनकी नक़्ल उतारने से रोका गया है। (क़ुरआन 49:11-12; 104:1-2) आप *(सल्ल.)* ने गालियाँ देने से और बदज़बानी (अपशब्द बोलने) से मना किया है। (हदीस : रियाज़ुस्सालिहीन-रिवायत इब्ने-उमर (रज़ि.)) आप *(सल्ल.)* ने कहा—

"जिसमें ये चार बातें हों वह पक्का मुनाफ़िक़ (कपटचारी) है : जब उसके पास अमानत रखी जाए तो ख़ियानत करे, जब बात करे तो झूठ बोले, जब वचन दे तो वचन भंग करे और जब किसी से झगड़ा हो तो गाली-गलौज पर उतर आए। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम रिवायत अब्दुल्लाह बिन-उमर (रज़ि.)) यद्यपि ये बुराइयाँ कभी-कभी बहुत मामूली और छोटी दिखाई देती हैं, लेकिन इन से आपसी सम्बन्ध बिगड़ जाते हैं और समाज में फ़साद फैल जाता है।

कुछ हराम (अवैध) चीज़ें

क़ुरआन में अल्लाह का फ़रमान है—

"निस्सन्देह अल्लाह ने तुम्हारे लिए हराम (अवैध) किया है : मुरदार और ख़ून और सूअर का गोश्त और वह जानवर जिसपर अल्लाह के सिवा किसी और का नाम लिया गया हो।" (क़ुरआन, 2:173 / 16:115)

> "व्यभिचार के क़रीब भी न फटको। वह बहुत बुरा कर्म है, और बड़ा ही बुरा रास्ता।" (क़ुरआन 17:32)

क्योंकि इससे सभ्यता की जड़ कटती है। नग्नता और बेहयाई फैलाने को भी अवैध ठहराया गया है।

> "यह शराब और जुआ और ये देव-स्थान और पाँसे, सब गन्दे शैतानी काम हैं, इनसे बचो।" (क़ुरआन, 5:90)

मद्यपान (शराब पीना) स्वास्थ्य को तबाह करती है और इसकी लत पूरे परिवार को बरबाद कर देती है। यही हाल जुए का भी है, जो इनसान को लालच में फँसाकर तबाह व बरबाद कर देता है। मद्यपान से बचने की ताकीद करते हुए आप *(सल्ल.)* ने कहा— "हर नशा करनेवाली चीज़ (ख़म्र) शराब है, और हर नशा लानेवाली चीज़ हराम (अवैध) है।" (हदीस : मुस्लिम, अबू-दाऊद, तिरमिज़ी) आप *(सल्ल.)* का कहना है— "जिस चीज़ की अधिक मात्रा नशा पैदा करे, उसकी थोड़ी मात्रा भी हराम है।" (हदीस : अबू दाऊद, मुसनद अहमद) आप *(सल्ल.)* ने उस दस्तरख़ान पर खाने से मना किया जिसपर शराब पी जा रही हो। (हदीस : सुनन-दारमी) एक और रिवायत में है कि, "शराब तमाम बुराइयों की जड़ है।" (हदीस : तबरानी) क्योंकि मद्यपान से बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। नशे की हालत में आदमी गाली-गलौज और लड़ाई-झगड़ा कर सकता है। इसके अलावा वह चोरी, व्यभिचार और क़त्ल भी कर सकता है। शराबी से किसी अच्छे काम की आशा नहीं की जा सकती।

नैतिक गुण

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* की शिक्षाओं में अच्छे चरित्र अपनाने के लिए उभारा गया है। इसके लिए आप *(सल्ल.)* का व्यक्तित्व एक आदर्श था।

क़ुरआन मजीद में है कि सच्चे लोगों के साथ हो जाओ। (क़ुरआन, 9:119) आप *(सल्ल.)* ने हमेशा सच बोलने और सत्यमार्ग को अपनाने की शिक्षा दी है। (हदीस : बुख़ारी, मुलिम; रिवायत इब्ने मसऊद (रज़ि.)) जितने भी नैतिक गुण हैं, उनकी बुनियाद सच्चाई है।

आप *(सल्ल.)* की शिक्षाओं में हमें अमानत, सब्र, वादा-निभाना, न्याय, सन्तुलन, दानशीलता, शर्म, क्षमा, संयम, और उपकार के निर्देश जगह-जगह मिलते हैं।

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने अच्छाई और बुराई का पैमाना मनुष्य के दिल को बताया है। आप *(सल्ल.)* का कहना है कि अच्छाई सुचरित्र को कहते हैं और गुनाह (पाप) की पहचान यह है कि उससे तुम्हारे दिल में खटक हो और तुम न चाहो कि लोगों को उसका पता चले। (हदीस : मुस्लिम) आप *(सल्ल.)* ने परहेज़गारी (संयम) अपनानेवालों को यह निर्देश दिया कि जो चीज़ संशय में डालनेवाली हो उसे छोड़कर उस कर्म को अपनाओ, जिसमें किसी प्रकार की आशंका न हो। इसी प्रकार एहसान (जो कि इस्लामी नैतिकता का सबसे ऊँचा दर्जा है) के सम्बन्ध में बताया कि तुम अल्लाह की उपासना इस प्रकार करो कि मानो तुम उसे देख रहे हो, अगर तुम उसे नहीं देखते तो वह तुम्हें देख रहा है। (हदीस : मुस्लिम, रिवायत ख़रतउमर (रज़ि.))

आम तौर पर हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* भाईचारे, एकता, आपसी सहयोग और अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने के लिए उभारते थे। यतीमों, ग़रीबों, मुहताजों, दरिद्रों विधवाओं, और बेसहारों की सहायता करनेवालों को बड़े पुण्य और शुभफल का शुभ सन्देश सुनाया। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने कहा, "सम्पूर्ण मानवजाति अल्लाह का कुटुम्ब है और अल्लाह सबसे अधिक मुहब्बत उससे करता है जो अल्लाह के बन्दों की सेवा करता है।" (हदीस : बैहक़ी) और इनसानों में सबसे अच्छा वह है जो दूसरों को लाभ पहुँचाए। (कुनूज़ुल-हक़ाइक़)

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने नैतिकता का नाता अल्लाह और परलोक में पूर्ण आस्था से जोड़ दिया है। यही कारण कि है इस्लामी नैतिकता इनसान को बाह्य से लेकर अन्तर तक को बदल देती है। आप *(सल्ल.)* का इरशाद है, 'जो तुममें अल्लाह और परलोक के दिन पर ईमान रखता हो, वह ज़बान से अच्छी बात निकाले, वरना चुप रहे। (हदीस : अल-अदबुल मुफ़रद) अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* ने कहा, "दुष्कर्मी व्यभिचार करते समय ईमानवाला नहीं होता, और चोर चोरी

करते समय ईमानवाला नहीं रहता और शराबी शराब पीते समय ईमानवाला नहीं होता।" (हदीस : मुस्लिम रिवायत हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि॰))

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* ने इनसानों को अच्छे आचरण के साथ जीवन के शिष्टाचार भी सिखाए हैं। उदाहरणस्वरूप मुलाक़ात के समय सलाम, बीमार की इयादत, मेहमान का सम्मान, खाना-खाते समय अल्लाह के नाम से शुभारम्भ और बाद में अल्लाह का शुक्र। मजलिसों के शिष्टाचार, कानाफूसी से बचना, आपस में उपहारों का लेन-देन और ख़ुशी-ग़मी में शामिल रहना। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

उपासनाएँ

(1) मशहूर हदीस है कि इस्लाम की बुनियाद पाँच बातों पर है—

(i) इस बात की गवाही देना कि अल्लाह के सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं और हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* उसके बन्दे और रसूल हैं। (ii) नमाज़ क़ायम करना (iii) ज़कात देना (iv) रमज़ान के रोज़े रखना और (v) हज करना। (हदीस : मुस्लिम, रिवायत उमर (रज़ि॰))

(2) ईमान के बाद पहली चीज़ जो अनिवार्य की गई वह नमाज़ है। रात-दिन में पाँच वक़्त की नमाज़ें अनिवार्य हैं। नमाज़ के लिए पाक-साफ़ होना ज़रूरी है। नमाज़ के द्वारा बन्दे (दास) का अपने स्वामी (अल्लाह) से दिन-रात सम्बन्ध स्थापित रहता है। नमाज़ बुराइयों और अश्लील कर्मों से रोकती है। नमाज़ समय की पाबन्दी और अनुशासन सिखाती है। (क़ुरआन, 20:14; 29:45; 4:103)

(3) रमज़ान के रोज़ों की अनिवार्यता इसलिए है कि इस महीने में अल्लाह ने मानवजाति के मार्गदर्शन के लिए क़ुरआन अवतरित किया। रमज़ान संयम और नैतिकता के प्रशिक्षण का महीना है। क़ुरआन मजीद जिन उच्च शिष्टाचारों की शिक्षा देता है, रोज़ा उनके प्राप्त करने में सहायता करता है। (क़ुरआन, 2:183-185) रोज़ों में अल्लाह की ख़ातिर दिन भर खाना-पीना और वासनात्मक इच्छाओं

को छोड़ दिया जाता है। नमाज़ें पढ़ी जाती हैं, क़ुरआन पढ़ा जाता है, ग़रीबों की अधिक से अधिक सहायता की जाती है।

(4) ज़कात का गहरा सम्बन्ध बन्दों के हक़ों से है। इसके द्वारा धन-दौलत पवित्र होती है और दूसरी ओर समाज के कमज़ोर और ग़रीब लोगों की मदद हो जाती है। (क़ुरआन, 9:60, 03) आप *(सल्ल.)* ने कहा, "बेशक अल्लाह ने लोगों पर ज़कात अनिवार्य की है, जो उनके धनवानों से लेकर उनके ग़रीबों में बाँटी जाएगी।" (हदीस : बुखारी, मुस्लिम) ज़कात सोना, चाँदी, नक़द रक़म, खेती की पैदावार, व्यापार सामग्री और जानवरों की एक निश्चित तादाद पर निश्चित समय पर विशेष दर के अनुसार निकाली जाती है। ज़कात न देने की स्थिति में जहन्नम के अज़ाब (यातना) की धमकी दी गई है। (क़ुरआन, 9:34-35)

(5) हज (ज़िलहिज्ज के महीने में) मक्का जाकर काबा का दर्शन और अन्य दूसरी उपासनाओं की रीतियाँ अदा करने का नाम है। यह जीवन में एक बार उन धनवानों पर अनिवार्य है जो वहाँ तक जाने और आने का व्यय सहन कर सकते हों। (क़ुरआन, 3:97) हज मुसलमानों का सबसे बड़ा अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन है। इसमें संसार के हर भाग में रहनेवाले, विभिन्न भाषाओं के बोलनेवाले, काले-गोरे, स्त्री-पुरुष सब एकेश्वरवादी केन्द्र की ओर दूर-दूर के स्थानों से दीवानावार खिंचे चले आते हैं। वे सब एक ही प्रकार के फ़क़ीराना लिबास (इहराम) में, एक भाषा में अल्लाह को पुकारते हैं "हाज़िर हूँ, ऐ अल्लाह मैं हाज़िर हूँ।" हज के द्वारा ईमान को शक्ति प्राप्त होती है, परहेज़गारी हासिल होती है और एकेश्वरवाद की शिक्षा मिलती है। वैश्विक मानव-समानता और इस्लामी बिरादरी का प्रदर्शन होता है।

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के पास एक आदमी आया। उसने कहा, "ऐ मुहम्मद *(सल्ल.)*!, तुम्हारा दीन (धर्म) क्या है?" आप *(सल्ल.)* ने कहा, "अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान। इसके बाद रात-दिन में पाँच वक़्त की नमाज़ पढ़ना, इसके बाद साल में एक महीने के रोज़े

रखना, इसके बाद यदि धन-दौलत हो तो उसपर एक साल बाद ज़कात देना और यदि सामर्थ्य हो तो जीवन में एक बार हज करना। यदि तूने यह कर लिया तो अल्लाह तुझे जन्नत देगा।" इस पर उस व्यक्ति ने कहा कि मैं इसमें न कुछ बढ़ाऊँगा और न घटाऊँगा, और फिर वह चला गया। आप *(सल्ल.)* ने उसकी ओर संकेत करके कहा कि अगर वह अपनी बात पर क़ायम रहा तो जन्नती (स्वर्ग में जाने योग्य) है।

सामाजिकता

परस्पर मिल-जुलकर सामाजिक जीवन व्यतीत करना मानव-स्वभाव है। समाज में विभिन्न प्रकार के व्यवसायों से जुड़े लोग होते हैं, जो एक-दूसरे की आवश्यकताओं की आपूर्ति करते हैं। परिवार समाज की बुनियादी इकाई है, विभिन्न परिवारों के मिलने से एक समाज अस्तित्व में आता है। इस्लाम समाज में पूर्ण न्याय के साथ अधिकारों और कर्तव्यों को विभाजित करता है। यदि मानवीय समाज इन निर्देशों को अपना ले तो उसको वास्तविक शान्ति प्राप्त हो सकती है।

इस्लाम ने अविवाहित रहने को नापसन्द किया है। क्योंकि यह प्रकृति से युद्ध है। विवाह के लिए इस्लाम ने कुछ नाते-रिश्तों को अवैध किया है। विवाह को स्त्री-पुरुष के वैध सम्बन्ध का अकेला साधन ठहराया गया है। व्यभिचार को अवैध किया गया है, क्योंकि इससे सभ्यता की जड़ कट जाती है। विवाह के लिए बिना किसी छल-कपट और बिना किसी बल प्रयोग की स्वीकृति, साक्षी और विवाह की उद्घोषणा आवश्यक की गई है। महर को औरत का अधिकार ठहराया गया है। विवाह करना हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* की सुन्नत (तरीक़ा) है। (क़ुरआन, 24:32 / 4:22 से 25 / 17:32)

पारिवारिक व्यवस्था में पति को प्रधानता प्राप्त है। रोटी, कपड़ा, मकान और अन्य आवश्यकताओं के प्रबन्ध का दायित्व उसी पर है। उसको निर्देश दिया गया है कि वह अच्छे ढंग से अपने कर्तव्यों का पालन करे। पत्नी की यह ज़िम्मेदारी है कि वह नेक, सज्जन और पति की आज्ञापालक बनकर रहे। अपने सतीत्व की और धन-दौलत की

सुरक्षा करे। पति-पत्नी को यह शिक्षा दी गई है कि वे एक-दूसरे के साथ उपकार की रीति अपनाएँ। बहुविवाह की स्थिति में चार की सीमा निर्धारित कर दी गई है। अर्थात एक व्यक्ति एक समय में चार से अधिक पत्नियाँ नहीं रख सकता। यह वैध है, किन्तु इसका अपनाया जाना अनिवार्य नहीं। यह वैधता भी न्याय की शर्त के साथ है (क़ुरआन, 4:3,19,33 / 2:237) हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने कहा कि सबसे अच्छी पत्नी वह है कि जब तुम उसको देखो तो तुम्हारा जी ख़ुश हो जाए। जब तुम किसी बात का उसे आदेश दो तो वह तुम्हारे आदेश का पालन करे और जब तुम घर में न हो तो वह तुम्हारे पीछे तुम्हारे माल की और अपने सतीत्व की रक्षा करे। (ज़ादुलमआद)

दाम्पत्यिक समस्याओं को सुलझाने के लिए क्षमा कर देना, अनदेखा कर जाना, समझाना और फिर कुछ सख़्ती करने को वैध ठहराया गया है। इसके बाद मध्यस्थता का ढंग अपनाने का आदेश दिया गया है। निर्वाह न होने की स्थिति में पुरुष को 'तलाक़' और स्त्री को 'ख़ुलअ' (विवाह-विच्छेद) का अधिकार प्राप्त है। कठिन परिस्थिति में इस्लामी अदालत से विवाह-विच्छेद भी कराया जा सकता है। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने सारे वैध कामों में तलाक़ को बहुत अप्रिय काम बताया है। (क़ुरआन, 4:35; 2:229-231; हदीस : अबू-दाऊद, मिश्कात)

अधिकार और कर्तव्य

सामाजिक बिगाड़ के वास्तविक कारण अन्यायपूर्ण व्यवहार और अधिकारों का हनन हैं। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* का मानवता पर बहुत बड़ा उपकार यह है कि आप *(सल्ल.)* ने हक़दारों को उनके हक़ दिलवाए और समाज में न्याय स्थापित किया। माता-पिता के अधिकारों के बारे में क़ुरआन में है कि उनके साथ सबसे अच्छा व्यवहार अपनाओ, वृद्धावस्था में उनकी ख़ूब सेवा करो और उन्हे 'उफ़' तक मत कहो। सेवा के पहलू से माँ का दर्जा पिता से बढ़कर है। कहा गया है कि माँ के पैरों तले जन्नत (स्वर्ग) है और पिता ज़न्नत का द्वार है। (क़ुरआन, 17:23-24; 46:15; हदीस : मुसनद अहमद, तिरमिज़ी, अबू-दाऊद)

औलाद के अधिकारों के बारे में कहा गया है कि उनको जहन्नम (नरक) की आग से बचाओ। उनकी सही शिक्षा-दीक्षा उनके लिए सबसे अच्छा उपहार है। लड़कियों का पालन-पोषण और उनकी शिक्षा पर जन्नत की शुभ-सूचना दी गई है।[1]

सिलारहमी यानी सगे-सम्बन्धियों के हक़ों को अदा करने का आदेश दिया गया। आप *(सल्ल॰)* ने कहा कि सगे-सम्बन्धियों से नाता तोड़नेवाला जन्नत में नहीं जा सकता। माँ-बाप से जो रिश्ते में जितना निकट हो वह उतना ही सद्व्यवहार का अधिक अधिकार रखता है। (क़ुरआन, 4:1; 13:21; 16:90; एवं हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

ग़ुलामों और सेवकों के अधिकारों के बारे में बताया गया है कि उनपर इतना बोझ मत डालो जो वे उठा न सकें। उनकी मेहनत का बदला पूरा-पूरा दिया करो। वे तुम्हारे भाई हैं, जो तुम खाते हो वह उन्हें भी खिलाओ और जो पहनते हो उन्हें भी वही पहनाओ। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* की मृत्यु का जब समय आया तो आप *(सल्ल॰)* की ज़बान पर ये शब्द थे कि, "नमाज़ क़ायम रखना और ग़ुलामों के साथ अच्छा बरताव करना।" कुछ पापों के प्रायश्चित में ग़ुलामों को आज़ाद करने की शिक्षा दी गई है। आप *(सल्ल॰)* ने ग़ुलामों की आज़ादी के लिए साधारणतया उभारा भी और इस काम पर जन्नत की शुभ-सूचना भी सुनाई। (क़ुरआन,4:36; अल-अदबुल-मुफ़रद, बुख़ारी, मुस्लिम, इब्ने-माजा, तिरमिज़ी)

अनाथों (यतीमों) के बारे में कहा गया कि उन की सम्पत्ति की सुरक्षा करो। जो लोग अवैध तरीक़े से उनका माल खाते हैं, वे अपने पेट आग से भर रहे हैं। अनाथों पर सख़्ती करने से मना किया गया है। उनके साथ अच्छा व्यवहार करनेवाले और उनकी ज़िम्मेदारी उठानेवाले को जन्नत की शुभ-सूचना सुनाई गई है। कहा गया कि सबसे अच्छा घर वह है जिसमें किसी अनाथ के साथ अच्छा बरताव किया जाए

[1] क़ुरआन, 66:6; 2:133, हदीस : इब्ने-माजा (रिवायत : इब्ने-अब्बास रज़ि॰); मिशकात (रिवायत; साद बिन अल-आस)

और सबसे बुरा घर वह है जिसमें किसी अनाथ के साथ दुर्व्यवहार किया जाए। (क़ुरआन, 2:220; 17:34; एवं हदीस : बुख़ारी, इब्ने-माजा)

पड़ोसियों के अधिकारों के बारे में हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने फ़रमाया है कि ख़ुदा की क़सम वह ईमानवाला नहीं जो ख़ुद पेटभर कर खाए और उसका पड़ोसी भूखा रह जाए। और वह भी ईमानवाला नहीं जिसकी शरारतों और उद्दण्डताओं से उसका पड़ोसी सुरक्षित न रहे। जिस पड़ोसी का घर तुम्हारे घर से जितना निकट है उतना ही वह तुम्हारे सद्व्यवहारों का अधिक पात्र है। उनके दुख-सुख में शामिल होना, उनकी आवश्यकता के समय काम आना, उनको भेंट और उपहार देना और उनका ध्यान रखना ये सब एक अच्छे समाज की ख़ूबियाँ हैं और इस्लामी शिक्षाओं की मौलिक अपेक्षा भी। (क़ुरआन, 4:36 एवं हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम, तिरमिज़ी)

फ़क़ीरों और ग़रीबों के हक़ों के बारे में बताया गया कि तुम्हारे धन-दौलत में माँगनेवालों और निर्धनों के हक़ हैं। उन्हें झिड़कने से रोका गया। आप *(सल्ल॰)* ने कहा, "सबसे अच्छा दान यह है कि तुम किसी भूखे को पेट भर खाना खिलाओ।" विधवा और ग़रीबों के लिए दौड़-धूप करनेवाले को अल्लाह के रास्ते में जिहाद करनेवाले, रात भर इबादत (उपासना) करनेवाले और हमेशा रोज़ा रखनेवाले के बराबर बताया गया है। (क़ुरआन, 2:215; 51:19; और हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* ने मानवाधिकारों को बहुत महत्व दिया है। आप *(सल्ल॰)* ने कहा कि, 'मुस्लिम समुदाय का वास्तविक निर्धन (मुफ़लिस) वह है जो क़ियामत के दिन ख़ुदा के सामने इस दशा में हाज़िर होगा कि उसके पास नमाज़, रोज़ा, ज़कात सब ही कुछ होगा किन्तु इसके साथ वह दुनिया में किसी को गाली देकर आया था, किसी पर लांछन लगाकर आया था, किसी का माल हड़प किया था, किसी का ख़ून बहाया था और किसी को अकारण ही मार-पीटकर आया था। फिर ख़ुदा उसकी नेकियाँ उन पीड़ितों में बाँट देगा और यदि इससे भी अधिकार-हनन का हिसाब चुकता न हुआ तो उनके पाप लेकर उसपर

डाल दिए जाएँगे और उसे जहन्नम में झोंक दिया जाएगा। आप *(सल्ल.)* ने सावधान किया कि यदि किसी ने किसी से कोई चीज़ उधार ली है या क़र्ज़ लिया है तो वह उसको अदा कर दे, वरना उसे क़ियामत के दिन हिसाब देना पड़ेगा। आप *(सल्ल.)* ने कहा कि शहीद के सारे पाप क्षमा हो जाएँगे लेकिन क़र्ज़ माफ़ नहीं होगा। (हदीस : बुख़ारी) ये रिवायतें मानवाधिकारों के महत्व को स्पष्ट करती हैं।

आप *(सल्ल.)* ने एक ऐसा समाज बनाया जिसमें सारे मुसलमान इस प्रकार संगठित थे मानो एक बदन हों। सहानुभूति, आपसी सहयोग और त्याग उनका स्वभाव बन गया था। एक-दूसरे को अच्छाई का आदेश देना और बुराई से रोकना उस समाज की आत्मा थी। (क़ुरआन, 3:110 / 9:71 / हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

समाज में औरत का स्थान

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* से पहले समाज में औरत का कोई स्थान नहीं था। अरब में तो लड़की के जन्म पर उसको जीवित गाड़ दिया जाता था। भारत में उसका संरक्षक उसको बेच भी सकता था। उसको देवदासी बनाकर वासना का शिकार बनाया जाता था। पति की चिता पर जला दिया जाता था। विधवा दूसरा विवाह नहीं कर सकती थी। उसका विरासत (पैतृक-सम्पत्ति) में अधिकार नहीं था। किसी प्रकार के स्वामित्व का अधिकार प्राप्त नहीं था। किसी भी मामले में उसके कोई अधिकार स्वीकार नहीं किए गए थे। ईसाइयों में भी औरत को तलाक़ का अधिकार नहीं है। दूसरी ओर आधुनिक पश्चिमी सभ्यता ने स्त्री-स्वतन्त्रता और समानता के नाम पर उसको निर्लज्ज बना दिया है। स्त्री-पुरुष की मिली-जुली सभाओं में औरत को स्टेज पर ले आए। यहाँ तक कि आपसी सहमति से स्वच्छन्द वासना-पूर्ति भी तथाकथित विकसित सभ्यता में में कोई दोष पूर्ण बात न रही। व्यवसाय और राजनीति में जबरन लाकर उसपर उसकी प्रकृति से बढ़कर बोझ डाल दिया गया।

इन दो चरम-सीमाओं के मध्य हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने समाज में औरत को आदर और सम्मान का स्थान प्रदान किया। मानवीय अधिकारों, नैतिक आदर्शों और भलाई के अज्र (प्रतिदान) में औरत को पुरुषों के बराबर का दर्जा दिया गया। ईशभय और परहेज़गारी में पत्नी पति से आगे बढ़ सकती है। (क़ुरआन, 16:97)

इस्लाम ने सबसे पहले औरत को विरासत में वैधानिक अधिकार दिया। (क़ुरआन, 4:11-13) उसको उसकी जाइज़ कमाई पर स्वामित्व का अधिकार दिया गया और दूसरी चीज़ों में भी उसके स्वामित्व के अधिकार को स्वीकार किया गया। (क़ुरआन, 4:32) शादी-ब्याह में औरत की सहमति आवश्यक है। बचपन में शादी हो जाए तो वह बड़ी होकर इससे मना करने का अधिकार भी रखती है। महर उसका हक़ है, पति की सामर्थ्य के अनुसार भरण-पोषण (Maintenance) का भी वह अधिकार रखती है। (क़ुरआन, 4:4, 24; 2:231, 233) यदि पत्नी किसी कारणवश पति के साथ जीवन व्यतीत न करना चाहती हो तो वह अपने पति से ख़ुलअ यानी तलाक़ माँग सकती है। उचित कारणों (जैसे धर्म परिवर्तन, ग़ायब हो जाना, भरण-पोषण न मिलना, नामर्दी, लम्बी क़ैद, पागलपन, अत्याचारपूर्ण व्यवहार आदि) के आधार पर वह अदालत से अलगाव हासिल (विवाह-विच्छेद) कर सकती है। (क़ुरआन, 2:229,231)

इस्लाम ने निगाहों को नीचा रखने और स्त्रियों को पर्दा व हिजाब अपनाने का आदेश दिया है। बेहयाई और अश्लीलता के प्रचार-प्रसार पर पाबन्दी लगाई है। इसका उद्देश्य समाज की सुरक्षा और नैतिक पवित्रता है। (क़ुरआन, 24:19, 31; 7:26-28; 33:33,53) इस्लाम ने स्त्रियों की प्रकृति के लिहाज़ से उनके लिए घर को प्राथमिकता दी है। क्योंकि गृह-कार्य और बच्चों की प्राथमिक शिक्षा-दीक्षा औरत ही अच्छे ढंग से कर सकती है। अलबत्ता शरीअत की मर्यादाओं के अन्दर रहते हुए सामाजिक, शैक्षणिक आर्थिक क्षेत्रों में काम करने और उन्नति प्राप्त करने पर इस्लाम ने कोई रोक नहीं लगाई। (33:33, 53)

पति-पत्नी के अधिकारों को सुनिश्चित करते हुए एक-दूसरे से उपकार का मामला करने का आदेश दिया गया। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)*

ने औरत से अच्छा व्यवहार करने और नर्मी से पेश आने की ताकीद की। यदि किसी की दो पत्नियाँ हों तो उसको उनके बीच न्यायपूर्ण व्यवहार करने का आदेश दिया गया है।

एक सभ्य संस्कृति के लिए जो वैचारिक, नैतिक और वैधानिक आवश्यकताएँ थीं उन सबको इस्लाम ने पूरा किया। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने औरतों, ग़ुलामों और अनाथों के अधिकारों की ओर विशेष ध्यान दिया– यानी सताए हुए, कमज़ोर और पिछड़े समुदायों की ओर। यही कारण है कि आप *(सल्ल.)* का अन्तिम भाषण मानवाधिकारों का घोषणापत्र (Charter of Human Rights) है।[1]

इस्लामी समाज और सभ्यता में औरत का स्थान उसके स्वभाव को दृष्टि में रखते हुए सन्तुलन के साथ सुनिश्चित किया गया और उसको किसी वैधानिक अधिकार से वंचित नहीं किया गया।

आजीविका

साम्यवादी व्यवस्था में समस्त उत्पादक संसाधनों (Means of Production) पर सरकार का आधिपत्य होता है और व्यक्तिगत सम्पत्ति की मान्यता नहीं होती। इसके प्रतिकूल साम्राज्यवादी व्यवस्था में धन-प्राप्त करने के तमाम संसाधनों को वैध समझा जाता है और पूरी व्यवस्था पर पूँजिपतियों का एकाधिकार हो जाता है। अतः धन-सम्पत्ति उन्हीं के मध्य घूमती रहती है। ब्याज इस व्यवस्था की नस-नस में समाविष्ट होता है। छल-कपट और धोखा-धड़ी की गर्मबाज़ारी रहती है और निर्धनों का शोषण होता है। परिणामतः समाज धनी (Haves) और निर्धन (Have Nots) समुदायों में बँट जाता है। मालदारों में आत्यान्तिक धन-लोभ, कृपणता, और लालच के गुण परवान चढ़ते हैं और निर्धनों में उनके ख़िलाफ़ द्वेष, शत्रुता और घृणा पलती रहती है। इस प्रकार समाज में निरन्तर परस्पर खींच-तान बरपा रहती है। इस्लाम ने इन दोनों

---

[1] क़ुरआन, 4:32, 24:19, 31 33:53, 59; बुख़ारी, मुस्लिम, तिरमिज़ी, अबू-दाऊद, मिश्कात, ज़ादुलमआद, बुलूग़ुलमराम।

अतियों के मध्य नैतिक सीमाओं के अन्दर न्यायपूर्ण आर्थिक व्यवस्था स्थापित की है।

इस्लाम-धर्म के अनुसार अल्लाह सम्पूर्ण सृष्टि का रचयिता, स्वामी, आजीविका-दाता, और पालनहार है। इस दृष्टिकोण से प्रत्येक व्यक्ति प्राकृतिक संसाधनों (खनिज पदार्थ, जंगल की लकड़ी और दूसरी चीज़ों से, समुद्र और नदियों) से आवश्यकतानुसार अपनी आजीविका प्राप्त कर सकता है। मानव जाति पर यह ईश्वर की महान अनुकम्पा है। हाँ, यदि कोई व्यक्ति व्यापारिक उद्देश्यों के लिए इन प्राकृतिक भण्डारों से बड़े पैमाने पर लाभ उठाना चाहता है तो सरकार उसपर टैक्स (कर) लगा सकती है। (क़ुरआन, 13:3; 2:29; 14:32-34; 7:10, 128)

आजीविका देने में अल्लाह ने सबको सामान नहीं रखा, बल्कि इसमें कमी-बेशी रखी गई है। किसी को बेहिसाब आजीविका देता है और किसी को नपा-तुला देता है, ताकि लोग एक-दूसरे से सहयोग करें। यह उसकी मर्ज़ी और हिकमत है और इसमें लोगों की आज़माइश भी है। (क़ुरआन, 17:27, 30; 43:32)

इस्लाम वैध तरीक़े से कमाए हुए धन, मीरास (पुरखों द्वारा छोड़ी सम्पत्ति), और उपहार पर लोगों का स्वामित्व स्वीकार करता है। वह कमाई हुई दौलत और बिना कमाई हुई दौलत (Unearned Income) के स्वामित्व में कोई अन्तर नहीं करता। (क़ुरआन, 4:7, 29; 5:38; 9:103; 51:19)

- हर आदमी अपना धन जमा भी कर सकता है। व्यापार में भी लगा सकता है और वैध कामों में भी ख़र्च कर सकता है। इसके बाद भी यदि उसकी दौलत बच जाए तो इस्लाम का विरासती-नियम एक व्यक्ति की मृत्यु के पश्चात उस धन-सम्पत्ति को वारिसों (उत्तराधिकारियों) और रिश्तेदारों में विभाजित कर देता है। इसका सविस्तार वर्णन क़ुरआन मजीद की सूरा-4 निसा में हुआ है। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के निर्देशानुसार मरनेवाले को इस बात का अधिकार है कि वह अपनी सम्पत्ति, का एक तिहाई भाग तक वसीयत कर सकता है। (क़ुरआन, 4:7, 13, 176; 2:240)

इस्लाम आजीविका प्राप्त करने के संसाधनों में वैध-अवैध का अन्तर करता है। धन कमाने के जिन तरीक़ों को इस्लाम ने अवैध (हराम) किया है वे ये हैं–

- सूद (ब्याज) (क़ुरआन, 2:275, 278-280)
- जुआ, सट्टा, लाटरी और धोखा तथा छल-कपट के कारोबार। (क़ुरआन, 5:90)
- अनाधिकार किसी की सम्पत्ति पर क़ब्ज़ा कर लेना, रिशवत और ख़ियानत। (क़ुरआन, 4:29, 2:188, 283)
- शराब और तमाम नशा करनेवाली चीज़ों के कारोबार। (क़ुरआन, 5:90)
- संगीत और वाद्ययन्त्रों का निर्माण उनका बेचना, नाचने-गाने का धन्धा आदि। (क़ुरआन, 31:9)
- मूर्ति-निर्माण तथा उसका क्रय-विक्रय, कला के नाम पर की जानेवाली अश्लील चित्रकारी। (क़ुरआन, 22:30; 21:51-69)
- शकुन-अपशकुन बताने और जादूगरी का धन्धा। (क़ुरआन, 5:90; 36:19; 2:102; 10:77)
- अनाथ की धन-सम्पत्ति को अनुचित ख़र्च करना। (क़ुरआन, 4:10/17:34;)
- अश्लीलता और निर्लज्जता का प्रचार-प्रसार (मॉडलिंग) और वेश्यावृत्ति। (क़ुरआन, 7:26-28; 24:10, 33; 17:32)
- नाप-तौल में कमी और मिलावट। (क़ुरआन, 83:1; 55:9; 7:85)
- चोरी, डाका, रहज़नी (लूट-पाट)। (क़ुरआन, 5:33, 38; 7:86)
- अवैध जमाख़ोरी यानी आवश्यक वस्तुओं को भाव बढ़ाने के लिए रोके रखना। (हदीस : तिरमिज़ी, मुस्लिम)

सैद्धान्तिक बात यह है कि जिन चीज़ों को क़ुरआन-हदीस में हराम (अवैध) किया गया है उनका उद्योग और व्यापार और उनसे किसी भी प्रकार का लाभ उठाना इस्लामी विधान में निषेध है।

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने धन कमाने के अवैध तरीक़ों को बहुत कम अवधि में समाप्त कर दिया और देखते-देखते एक पवित्र आर्थिक व्यवस्था प्रचलित कर दी। यह सुधार आप *(सल्ल.)* ने शिक्षण-प्रशिक्षण और विधि द्वारा किया। आप *(सल्ल.)* ने कहा जो शरीर हराम कमाई से पला-बढ़ा हो उसके लिए जहन्नम की आग ही अच्छी है।[1]

अवैध तरीक़ों के अलावा सभी तरीक़ों से आजीविका कमाने की अनुमति है। उदाहरणस्वरूप मज़दूरी पर काम करना। (क़ुरआन, 28:26) आप *(सल्ल.)* ने मज़दूरों के अधिकारों के बारे में बताया है कि उनकी मज़दूरी उनका पसीना सूखने से पहले दे दी जाए। (हदीस : इब्ने-माजा उमर (रज़ि॰) से रिवायत) आप *(सल्ल.)* ने बचपन में मक्का के लोगों की बकरियाँ मज़दूरी पर चराईं। बाद में आप *(सल्ल.)* अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार करने लगे थे। आप *(सल्ल.)* व्यापार और आज़ाद पेशे को पसन्द करते थे। कहा कि सत्यवादी और ईमानदार व्यापारी का परिणाम नबियों, सिद्दीक़ों (सत्यवादियों) और शहीदों के साथ होगा। (हदीस : तिरमिज़ी) क़ुरआन में है कि नमाज़ के बाद अल्लाह का फ़ज़्ल (रोज़ी) तलाश करने के लिए ज़मीन में फैल जाओ। (क़ुरआन, 2:10) अनिवार्य उपासनाओं (इबादतों) के बाद हलाल रोज़ी के लिए कोशिश भी उपासना (इबादत) है। (हदीस : बैहक़ी) आप *(सल्ल.)* ने लोगों को हलाल रोज़ी कमाने के लिए प्रेरित किया। एक बार किसी ने आप *(सल्ल.)* से पूछा कि ऐ अल्लाह के रसूल! सबसे ज़्यादा अच्छी कमाई कौन-सी है? आप *(सल्ल.)* ने बताया कि आदमी का अपने हाथ से काम करना और वह व्यापार जो हर तरह की बेईमानी से पाक हो। (हदीस : मिश्कत)

आप *(सल्ल.)* ने भीख माँगने को दोषपूर्ण एवं निकृष्ट कर्म ठहराया। (हदीस : बुख़ारी) इससे काहिली (आलस्य), निर्धनता और

[1] हदीस : मुअजमुस्सग़ीर, तबरानी

दरिद्रता पनपती है, जो किसी भी सभ्यता को दीमक की तरह चाट जाती है। आप *(सल्ल.)* के पास एक आदमी माँगने आया, आपने पूछा, "तुम्हारे पास क्या है?" उसने कहा, "एक प्याला"। आप *(सल्ल.)* ने उसको दो दिरहम में नीलाम करा दिया। एक दिरहम से उसके बाल-बच्चों के खाने का प्रबन्ध कर दिया और दूसरे दिरहम से एक कुल्हाड़ी ख़रीद कर दी। कहा कि जंगल जाकर लकड़ियाँ काट कर लाओ और शहर जाकर बेचो। उसने ऐसा ही किया। कुछ ही दिनों में उसकी ग़रीबी दूर हो गई। एक आदमी को आप *(सल्ल.)* ने देखा कि उसके हाथों पर काम-काज से गट्टे पड़ गए हैं। आप *(सल्ल.)* ने उसके हाथों को चूम लिया और कहा कि 'वे हाथ नरक की आग में नहीं जा सकते जिनके द्वारा हलाल रोज़ी कमाई गई हो।' (हदीस : असदुल-ग़ाबा)

इस्लाम चाहता है कि वैध ढंग से प्राप्त किया हुआ धन जमा करके न रखा जाए बल्कि उसको गतिशील रखा जाए। यानी उद्योग-धन्धों, व्यापार, खेती-बाड़ी और अन्य वैध कामों में लगाया जाए ताकि उससे सबको यथोचित लाभ पहुँचता रहे। (क़ुरआन, 57:7)

इस्लाम की शिक्षा यह है कि लोगों के पास वैध आमदनी से आवश्यकताओं की पूर्ति होने के बाद जो बच जाए उसको समाज के ग़रीबों पर ख़र्च किया जाए। इस उद्देश्य के लिए इस्लाम ने नक़द रक़म और सोना चाँदी पर ज़कात तथा खेती की पैदावार पर उश्र (दसवाँ भाग) अनिवार्य किया है। इसके अलावा भी अल्लाह के रास्ते में अच्छे कामों में दान-पुण्य करने की प्रेरणा दी है। इन दान-पुण्यों से निर्धन वर्गों की सहायता होती है और दूसरे सामाजिक भलाई के काम होते हैं। (क़ुरआन, 2:177, 195, 219; 3:92; 70:24, 25)

इस्लाम की आर्थिक व्यवस्था समाज में आर्थिक सन्तुलन स्थिर रखते हुए नैतिक गुणों को परवान चढ़ाती है। लोगों में धन का लोभ और कंजूसी के बजाय परस्पर सहयोग, हमदर्दी, दानशीलता और अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने के गुण पैदा करती है। ग़रीबों में

क़नाअत (थोड़े में सन्तोष करने की भावना) को परवान चढ़ाती है। जबकि दूसरी आर्थिक व्यवस्थाओं में नैतिक मूल्यों का कोई ध्यान नहीं रखा जाता।

राजनीति

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने धार्मिक जीवन और भौतिक जीवन की पृथकतावादी धारणा को समाप्त करके एक व्यापक जीवन-व्यवस्था प्रदान की। इसमें राजनीति भी इबादत (उपासना) बन गई। इस्लाम में जब दुनियादारी अल्लाह के आदेशों और उसके रसूल के तरीक़े के अनुसार हो तो वह दीनदारी (धर्मपरायणता) हो जाती है।

क़ुरआन मजीद के अनुसार, "हुकूमत अल्लाह की है और राजनीतिक व्यवस्था और क़ानून में प्रभुत्व (Sovereignity) केवल अल्लाह की है, न किसी बादशाह की, न किसी परिवार तथा समुदाय की और न ही जनता की। इनसान अल्लाह का खलीफ़ा (प्रतिनिधि) है। उसका काम अपना हुक्म चलाना नहीं है, बल्कि अल्लाह के आदेशों को लागू करना है। (क़ुरआन, 7:54; 12:40; 38:26)

राजनीतिक व्यवस्था में अल्लाह और उसके पैग़म्बर के नियमों को प्रभुत्व प्राप्त है, जिसे चुनौती नहीं दी जा सकती। राष्ट्राध्यक्ष के आदेशों का पालन प्रत्येक नागरिक पर उस समय तक अनिवार्य है, जब तक कि वह ईश्वर की नाफ़रमानी का आदेश न दे। (क़ुरआन, 7:54; 4:59)

इस्लामी राजनीतिक व्यवस्था में सलाहकार-समिति को मौलिक महत्व प्राप्त है। (क़ुरआन, 3:159) जिन विषयों में अल्लाह की ओर से कोई आदेश नहीं होता, हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* उन मामलों में अपने साथियों *(रज़ि.)* से परामर्श करते।

आप *(सल्ल.)* ने अल्लाह के आदेश से सामाजिक न्याय को इस्लामी राज्य की स्थापना का मौलिक उद्देश्य ठहराया। इस राज्य की

उत्कृष्ट विशेषता नमाज़ का आयोजन, ज़कात की वुसूली और वितरण, भलाइयों की स्थापना और बुराइयों का समापन निश्चित की गई है।

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के कालखण्ड में ग़ैर-मुस्लिम नागरिकों के अधिकार सुरक्षित थे। उनकी जान-माल, उनकी इज़्ज़त-आबरू उसी तरह सम्माननीय थी जिस तरह किसी एक मुसलमान की होती है। उनको उनके धर्म पर अमल करने की पूरी स्वतंत्रता थी। धर्म के मामले में उनपर कोई दबाव नहीं था। मुसलमानों से ज़कात और अन्य अनुदान वुसूल किए जाते और ग़ैर-मुस्लिमों से 'जिज़या (सुरक्षा-शुल्क) लिया जाता था। इस्लामी हुकूमत उनकी सुरक्षा का ज़िम्मा लेती थी। (क़ुरआन, 2:256; 9:29)

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने अल्लाह के अवतरित किए हुए आदेशों को लागू किया। इन आदेशों में कमी-बेशी करने का आप *(सल्ल.)* को अधिकार प्राप्त न था। (क़ुरआन, 4:105; 2:178; 5:38; 24:2,4, 5:33)

इस्लामी राज्य एक कल्याणकारी राज्य (Welfare State) होता है। इसमें कोई व्यक्ति जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं से वंचित नहीं रहता। आप *(सल्ल.)* का आदेश है कि "राज्य प्रत्येक उस व्यक्ति को सहारा देगा जिसका कोई सहारा न हो।" मानवजाति का यह मौलिक अधिकार स्वीकार किया गया कि उसके पास रहने का ठिकाना, शरीर ढाँकने को कपड़ा, खाने को रोटी और पीने को स्वच्छ पानी हो। कहा कि सम्पूर्ण मानवजाति अल्लाह का कुटुम्ब है, अतः अल्लाह के निकट सबसे अधिक प्रिय वह व्यक्ति है जो उसके कुटुम्ब के लिए का हितकारी हो। (जामेअ सग़ीर—तबरी, बैहक़ी)

आज मानवाधिकारों की आवाज़ उठाई जाती है। व्यवहारतः अधिकार देनेवाले हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ही हैं। प्रत्येक व्यक्ति को उसकी जान-माल और इज़्ज़त की सुरक्षा का मौलिक अधिकार दिया

गया। अपना मत प्रकट करने की स्वतन्त्रता स्वीकार की गई। (क़ुरआन 17:33 / 4:29 / 49:11,12 / 6:108 / 2:256 / 4:148 / 3:110)

इस्लामी राज्य की सुरक्षा और अल्लाह के कलिमे (वाणी) का बोलबाला करने के लिए जिहाद (धर्मयुद्ध) भी आवश्यक है। युद्धों के अवसर पर हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* ने हिदायत दी कि पहले अल्लाह के आज्ञापालन (इस्लाम) की ओर बुलाना, अन्यथा इस्लामी राज्य की अधीनता स्वीकार करने के लिए कहना। अगर जंग की नौबत आए तो विशुद्ध अल्लाह ही के लिए लड़ना और युद्ध में औरतों, बच्चों, और बूढ़ों पर हाथ न उठाना। किसी की उपासना-गृह के पुजारियों को न मारना। पेड़ों को न काटना, फ़सलों को बरबाद न करना। मक्का की विजय के अवसर पर आप *(सल्ल॰)* का आचरण एवं व्यवहार इन शिक्षाओं का स्पष्ट उदाहरण है।

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में न्याय, इनसाफ़ और वचन-पालन करने को आधारभूत महत्व दिया गया और इस पर आप *(सल्ल॰)* क़ायम रहे। (क़ुरआन, 2:126; 5:8; 9:41; 2:205; 27:34; सीरतुन्नबी (सल्ल॰), अर्रहीक़ुलमख़्तूम)

बैतुलमाल (राजकोष) में ज़कात, उश्र (दसवाँ भाग) फ़ै (पलटाकर लाया हुआ माल) जमा किया जाता। इस प्रकार एक तरफ़ धनवानों का सुधार होता और दूसरी तरफ़ समाज के निर्धन वर्गों की सहायता की जाती। आप (सल्ल॰) ने इसके लिए तहसीलदारों (वसूली करने वालों) और कलेक्टरों (संग्रह करनेवालों) की नियुक्ति की। ज़कात की मद को फ़क़ीरों, मुहताजों, कार्यकर्ताओं और इस्लाम क़बूल करनेवालों की सहायता के लिए और ग़ुलामों को आज़ाद कराने और क़र्ज़दारों की मदद करने तथा ख़ुदा के रास्ते में और मुसाफ़िर की मदद करने के काम में इस्तेमाल किया जाता था। राजकोष को ख़ुदा और ख़ुदा के बन्दों की अमानत समझा जाता था। नाजायज़ माल इसमें न रखा जाता और न

माल का अपव्यय किया जाता। (क़ुरआन, 22:41; 9:60, 103) तहसीलदारों और राष्ट्राध्यक्ष को भी इसमें से आवश्यकता से अधिक लेने का अधिकार प्राप्त न था। उनका वेतन भी एक साधारण और मध्यम वर्ग के आदमी के बराबर थी और किसी प्रकार का अतिरिक्त लाभ उनके लिए न था। हर आदमी को राजकोष का हिसाब पूछने का अधिकार प्राप्त था। (क़ुरआन, 9:60; सीरतुन्नबी (सल्ल॰); सीरते-ख़ुलफ़ा (रज़ि॰))

न्यायपालिका

क़ुरआन मजीद हमें यह बताता है कि संसार में पैग़म्बरों को स्पष्ट प्रमाण, किताब और मीज़ान (तुला) के साथ भेजने का उद्देश्य मानव-समाज में न्याय की स्थापना है—

"ताकि लोग इनसाफ़ पर क़ायम रहें।" (क़ुरआन, 57:25)

इसी प्रकार हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* को क़ुरआन के साथ भेजने का उद्देश्य न्यायपूर्ण व्यवस्था को लागू करना है। अल्लाह का निर्देश है—

> "ऐ नबी, हमने यह किताब हक़ के साथ तुम्हारी ओर अवतरित की है ताकि जो सीधा मार्ग अल्लाह ने तुम्हें दिखाया है, उसके अनुसार लोगों के बीच फ़ैसला करो।"
>
> (क़ुरआन, 4:105)

क़ुरआन मजीद में है कि जो लोग अल्लाह के क़ानून के अनुसार निर्णय नहीं करते वे अवज्ञाकारी, ज़ालिम और पापी हैं। (क़ुरआन, 5:44,45,47) कपटाचारियों की भी यही पहचान बताई गई है कि वे अल्लाह और उसके पैग़म्बर के बजाय दूसरी झूठी अदालतों से फ़ैसला चाहते हैं। (क़ुरआन, 4:60)

ईश्वरीय क़ानून से बढ़कर कोई नहीं। किसी के लिए कोई छूट नहीं। वक़्त के ख़लीफ़ा के विरुद्ध भी मुक़द्दमा चलाया जा सकता है और उसके विरुद्ध फ़ैसला भी सुनाया जा सकता है और व्यवहारतः इतिहास में ऐसा हुआ भी है।

क़ुरआन और हदीस में विवाह, पति-पत्नी के अधिकार, तलाक़, रज़ाअत (बच्चे को दूध पिलाना), इद्दत (शरीअत द्वारा निर्धारित वह अवधि जिसमें औरत दूसरा निकाह न कर सके) और विरासत से सम्बन्धित क़ानून बयान किए गए हैं। इसी प्रकार फ़ौजदारी क़ानून (Criminal Laws) भी बयान किए गए हैं, यानी क़िसास (ख़ून का बदला), चोरी, व्यभिचार, व्यभिचार का मिथ्यारोपण, बग़ावत, ज़मीन में बिगाड़ फैलाना और इस्लाम से फिर जाना इत्यादि की सज़ाएँ निश्चित कर दी गई हैं। शराब पीने तथा अन्य अपराधों पर उनकी जघन्यता के अनुसार दण्ड दिया जाता है। हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने बिना किसी कमी-बेशी के अल्लाह की निर्धारित सज़ाओं को लागू किया। एक बार एक बड़े क़बीले की फ़ातिमा नामक औरत चोरी करने के जुर्म में पकड़ी गई। लोग चाहते थे कि उसकी सज़ा माफ़ कर दी जाए। आप *(सल्ल.)* ने कहा, "ख़ुदा की क़सम! अगर मुहम्मद *(सल्ल.)* की (यानी मेरी) बेटी फ़ातिमा *(रज़ि.)* भी चोरी करती तो मैं उसका हाथ काट डालता।" (सीरतुन्नबी (सल्ल.))

यदि कोई मामला अदालत में आने से पहले परस्पर मध्यस्थता के द्वारा हल कर लिया जाता है तो ठीक है, अन्यथा अदालत में मुक़द्दमा दाख़िल होने के बाद क़ानून के अनुसार ही न्यायपूर्ण फ़ैसला किया जाएगा।

इस्लामी व्यवस्था में लोगों के अन्दर परलोक के प्रति उत्तरदायी होने की धारणा इतनी गहरी हो जाती है कि उनके अन्तःकरण स्वयं उनके निरीक्षक हो जाते हैं। प्रारम्भिक काल में जिनसे अपराध हो जाता

वे ख़ुद अपने आपको क़ानून के हवाले कर देते और आग्रह करते कि ऐ अल्लाह के पैग़म्बर मुझसे अमुक अपराध हो गया है, मुझे पाक कर दीजिए। ऐसा भी होता कि आप *(सल्ल०)* उसको टालना चाहते और वह आदमी अपने आपको पाक करना चाहता और अन्ततः उसको निर्धारित सज़ा दे दी जाती।

कुछ लोग इस्लाम के आपराधिक दण्डों पर आपत्ति करते हैं। उनको मालूम होना चाहिए कि इस्लामी क़ानून अकारण ही लोगों को दण्ड देना नहीं चाहता। बल्कि वह पहले लोगों का प्रशिक्षण और सुधार करता है। अच्छाई का वातावरण बनाता है। इसके बाद अपराध हो जाने की गवाही पूरी होने पर दण्ड दिया जाता है। यहाँ कुछ अपराधियों को दण्ड देकर पूरे समाज को शान्ति और सौहार्दपूर्ण वातावरण में रखा जाता है।

जिन देशों में इस्लामी क़ानून लागू है उनमें अपराध बहुत कम हैं। उदाहरण स्वरूप अमेरिका, ब्रिटेन और फ्रांस के अपराधों की तुलना (आकड़ों के आलोक में) सऊदी अरब में होनेवाले अपराधों से की जाए तो वास्तविकता प्रकट होकर सामने आ जाती है। हालाँकि वहाँ भी इस्लाम के कुछ ही नियम लागू हैं।

सच्ची बात यह है कि इनसानों के बनाए हुए क़ानून में हमेशा ग़लतियाँ और कमियाँ होती हैं। उनमें बार-बार परिवर्तन और सुधार की आवश्यकता पड़ती है, जब कि अल्लाह का क़ानून हर प्रकार की कमियों और त्रुटियों से पवित्र होता है।

भलाई चाहनेवाले नेक समुदाय का निर्माण

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल०)* ने ईमानवालों का एक अन्तर्राष्ट्रीय इस्लामी गरोह बनाया। क़ुरआन ने इसे हिज़्बुल्लाह-उम्मते-मुस्लिमा, ख़ैर उम्मत, या उम्मते-वसत इत्यादि नामों से याद किया है। इसमें विभिन्न

समुदायों और क़बीलों के लोग शामिल थे। उनके रंग, नसल, बोलियाँ और क्षेत्र अलग-अलग थे। लेकिन उन सबके बीच 'ला इला-ह इल्लल्लाह यानी "अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं" की आस्था उभयनिष्ठ थी। यह कलिमा (वाक्य) एक वैचारिक एकता में संसार के सारे इनसानों को संगठित कर देता है। इस नेक गरोह एवं समुदाय की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएँ निम्नलिखित थीं–

1. उच्च नैतिक चरित्र

नबी *(सल्ल.)* ने ईमानवालों को शिक्षा दी और उनको प्रशिक्षित किया, उनमें दीन की सूझ-बूझ पैदा की और उनके अन्तःकरण को विकसित किया। वे निश्छल, सच्चे और पक्के मुसलमान थे। वे अल्लाह और उसके पैग़म्बर की एक-एक बात पर अमल करते। (क़ुरआन, 3:164, 193; 9:122; 24:51)

2. उद्देश्यपूर्ण जीवन

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने बताया कि मानव-जीवन का उद्देश्य खाना, नस्ल को बढ़ाना और अपने जीवन-स्तर को ऊँचा करना नहीं है, बल्कि अल्लाह ने उसको संसार में अपना नायब (ख़लीफ़ा) बनाकर पैदा किया है। उसका काम भलाई का हुक्म देना और बुराई से रोकना है। संसार में जो अत्याचार और उपद्रव फैला हुआ है, उसे खत्म करके उसकी जगह न्याय और इनसाफ़ को क़ायम करना है। ईमानवालों का कर्तव्य है कि संगठित रूप से अल्लाह के रास्ते में निरन्तर भरसक प्रयत्न करें, यहाँ तक कि अल्लाह का दीन (इस्लाम) संसार में छा जाए। उनका अन्तिम उद्देश्य ईश-प्रसन्नता की प्राप्ति और परलोक की सफलता है। (क़ुरआन, 3:110, 185; 4:59; 2:143; 22:78; 48:28)

बलिदान की भावना

यह एक सच्चाई है कि संसार में कोई दृष्टिकोण और कोई आन्दोलन उस वक़्त तक सफल नहीं हो सकता जब तक कि उसके माननेवाले कठिनाइयों और परीक्षाओं से न गुज़रें और इस उद्देश्य के लिए अपनी जान-माल की बलि न चढ़ाएँ। अतः हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* के मार्गदर्शन में सहाबा *(रज़ि॰)* की जमाअत को भी कठिन परीक्षाओं से गुज़रना पड़ा। यहाँ तक कि अल्लाह ने उनको उनके उद्देश्य में सफलता प्रदान की अल्लाह उनसे प्रसन्न हुआ और वे अल्लाह से। (क़ुरआन, 3:146; 2:155, 156, 214; 9:24, 100)

सारांश

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* का जन्म 22 अप्रैल, सन् 571 ई. और स्वर्गवास जून 632 ई. को हुआ।

- हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* अन्तिम सन्देष्टा, सम्पूर्ण संसार के लिए अत्यन्त करुणामय और महान चरित्रवान हैं। ईमानवालों के लिए आप *(सल्ल.)* के जीवन में सर्वोत्तम अनुकरणीय आदर्श है।

1. हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने क़ुरआन को इनसानों तक पहुँचाया जो अल्लाह की वाणी (कलाम) है, जिसमें इनसानों के लिए सीधा और सही मार्गदर्शन है और जीवन व्यतीत करने का वह तरीक़ा बयान किया गया है जो अल्लाह को पसन्द है।
2. इस्लाम पर आप (सल्ल.) ने अमल करके दिखाया। हदीसें आप *(सल्ल.)* के कथन और व्यवहार हैं और सुन्नत आप *(सल्ल.)* का व्यावहारिक ढंग है। (क़ुरआन और हदीस इस्लाम के आधारभूत स्रोत हैं।)
3. आप (सल्ल.) ने सहाबा *(रज़ि.)* को सुसंगठित किया जो सच्चे और अच्छे मुसलमानों की जमाअत (संगठन) थी। वे अल्लाह और पैग़म्बर का अनुपालन करते और इस्लाम को प्रभावी करने के लिए तन-मन-धन से तैयार रहते थे।
4. आप (सल्ल.) ने इस्लामी शिक्षाओं के अनुसार एक सम्पूर्ण राज्य की स्थापना की और उसमें अल्लाह के आदेशों को लागू किया।

- जो व्यक्ति भी क़ुरआन और हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के जीवन-चरित्र का निष्पक्ष रूप से अध्ययन करेगा वह यह स्वीकार किए बिना नहीं रह सकता कि विश्व के इतिहास में कोई आदमी ऐसा नहीं हुआ, जिसने आप *(सल्ल.)* जैसा महान कार्य किया हो। आप (सल्ल.) का

व्यक्तित्व वास्तव में वह था जो नया इतिहास रचते हैं। आप *(सल्ल.)* ने संसार में एक नए युग का शुभारम्भ किया।

- हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने जिस समय इस्लाम का आमन्त्रण और आन्दोलन आरम्भ किया, उस समय आप *(सल्ल.)* संसाधनहीन थे। सीमित साधनों से आरम्भ करके आपने एक नई संस्कृति और सभ्यता को संसार में स्थापित किया। यह अल्लाह की मदद का, आप *(सल्ल.)* की हिकमत और दूरदर्शिता का तथा सहाबा *(रज़ि.)* के बलिदानों का परिणाम था।

- हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* का व्यक्तित्व पवित्र और उत्तम गुणों का संग्रह है, जो सबके लिए सटीक और अनुकरणीय आदर्श है। आप *(सल्ल.)* के व्यक्तित्व में एक शिक्षक एवं प्रशिक्षक, अभिभावक एवं पालक, नैतिक ज्ञानदाता, कुशल अर्थशास्त्री, मार्गदर्शक एवं नेता, प्रबन्धक एवं शासक, कमांडर एवं विजेता, राष्ट्राध्यक्ष और प्रशासक तथा न्यायधीश, सबके लिए अनुकरणीय आदर्श है।

- हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* से पहले अरब एक असभ्य और लड़ाका क़ौम थे। उनमें साम्प्रदायिक पक्षपात की तीव्रता थी। वे किसी क़ानून के पाबन्द नहीं थे। हर प्रकार की नैतिक बुराइयों का शिकार थे। यह आप *(सल्ल.)* का महान कारनामा है कि आप *(सल्ल.)* ने एक ऐसी क़ौम की वैचारिक सूझ-बूझ को बदल डाला और 23 वर्ष की अल्पावधि में सम्पूर्ण अरब प्रायद्वीप के बारह लाख वर्ग मील क्षेत्र को एक सुव्यवस्थित राज्य में परिवर्तित करके एक नियम और एक विधान का पाबन्द बना दिया। यह एक व्यापक, चहुँमुखी और पूर्ण क्रान्ति थी। इस क्रान्ति ने न केवल लोगों का सुधार किया बल्कि पूरी की पूरी क़ौम को बदलकर रख दिया और उनको विश्व का नायक और पेशवा बना दिया।

- हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने ईश-उपासना के लिए संन्यासियों, जोगियों, भिक्षुओं, राहिबों और सूफ़ियों की तरह संसार को त्यागने की शिक्षा नहीं दी, बल्कि लोगों को संसार के ठीक मंझधार में पड़कर ईमानदारी और सच्चाई के मार्ग पर चलना सिखाया।
- हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* की क्रान्ति के परिणामस्वरूप लोगों का जीवन बदल गया। लोग अधर्म और बहुदेववाद छोड़कर एकेश्वरवाद के ध्वजावाहक बन गए, जो हर नैतिक प्रतिबन्ध से आज़ाद थे। वे अल्लाह और उसके रसूल के अधीन और आज्ञाकारी हो गए। ईश्वर के समक्ष उत्तरदायी होने की धारणा ने उनको सच्चा और चरित्रवान बना दिया।
- जो अनैतिक थे, वे नैतिक मूल्यों के रक्षक बन गए। जो अज्ञानी थे, वे ज्ञान से आभूषित हुए और लेखनी के स्वामी बन गए। जो समाज अधिकारों के हनन और अत्याचारों-दुराचारों से भरा पड़ा था, वह एक बेहतरीन सुचरित्र समाज बन गया। जिनकी रोज़ी में लूट-खसोट, धोखा, छल, ब्याज का लेन-देन और मज़दूरों पर अत्याचार था, वे सभी प्रकार की हरामख़ोरी से रुक गए। जिनकी राजनीति विसंगतियों और अत्याचारों से भरी हुई थी, वह न्यायप्रिय, मानवाधिकारों और अम्न व शान्ति का ध्वजावाहक बन गई। जिनके युद्ध तबाही, बरबादी और लूट-मार के लिए होते थे; वे युद्ध और समझौते के महान नियमों के पालनकर्ता बन गए। आप *(सल्ल.)* ने असंगठित लोगों को संगठित किया, किसी भी क़ानून को न मानने वाले समाज को क़ानून का पाबन्द बनाया। निर्बल और निम्न समुदायों को मानवीय सम्मान प्रदान किया और समानता का पाठ पढ़ाया।

- हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* का सन्देश संक्षिप्त शब्दों में एक ईश्वर, एक इनसान और एक व्यवस्था है। इसके नियम सार्वभौमिक और शाश्वत हैं।

- हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने अल्लाह का पैग़ाम अल्लाह के बन्दों तक पहुँचा दिया, अमानत का हक़ अदा कर दिया और अपनी उम्मत (समुदाय) के शुभ-चिन्तन में कोई कसर नहीं छोड़ी।

- अल्लाह के इस अन्तिम पैग़म्बर ने हर प्रकार की कठिनाइयों और मुसीबतों का सामना किया। ग़रीबी झेली, भूखे रहे, लेकिन हर दशा में आप *(सल्ल.)* ने इहलोक पर परलोक को प्राथमिकता दी और अन्ततः अपने महानतम् प्रभु को पुकारते हुए इस नश्वर संसार से प्रस्थान कर गए। असंख्य दरूदो-सलाम हों आप *(सल्ल.)* के महान व्यक्तित्व पर।

यह है हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* की दावत (आमन्त्रण), जीवनी और आप *(सल्ल.)* के कारनामों का संक्षिप्त परिचय, जिसको हमने क़ुरआन, हदीस और जीवनी के प्रमाणित स्रोतों से संकलित किया है। धन्य है-वह व्यक्ति जिसने हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* को अपना पथ-प्रदर्शक और उपदेशक बना लिया और आपका अनुसरण किया, लोक और परलोक में ऐसा व्यक्ति सफल हो गया। सारी सृष्टि का धर्म, इस्लाम (अल्लाह के आदेशों का पालन) ही है। इसी इस्लाम को अल्लाह ने अपने बन्दों के लिए पसन्द किया है और क़ियामत (परलोक) में इस्लाम के सिवा कोई और दीन (धर्म) स्वीकार्य न होगा। अल्लाह हम सबको इस्लाम के नियमों पर चलने की शक्ति प्रदान करे। आमीन। (क़ुरआन, 3:83-85; 5:3; 13:15)